

रत्नपाणिकृता

उषाहरण-नाटिका

अथ मङ्गलश्लोकाः ।—

तत्र प्रथमं विनायकस्य :—

विघ्नं विनिश्चयिष्ये जामदग्न्यं प्रचण्डघुष्ठाभिधपाशतो मः ।
प्रगृह्य चिक्षेप गृहे स शीरेः पायादपायादनपायमूर्तिः ॥१॥

अथ विष्णोः :—

यो वैनतेयमधिरुह्य सुतायजाभ्याङ्गुलना सहस्रभुजखण्डनमुच्चकार ।
नागावरुद्धमनिरुद्धमरुद्धमडा सोऽव्वाडरि धरधरोऽनवलोऽष्टबाहुः ॥२॥

अथ शिवस्य :—

स्वयं भिक्षाचारी वितरणविधौ सर्वाभिधौ
विवादो निर्मृत्सु रविवरसताभोऽपि विर्ह्यचिः ।
धिरक्तदशक्षीणो विधुवलिभालोऽप्यतिलक—
इचरित्रं चित्रं स प्रभवतु मुदे यस्य भवताम् ॥३॥

अथ भानोः :—

वृष्ट्या मृष्टिकरस्तहस्रकिरणस्वक्षुब्धगर्यामक्षी
साक्षी रोमहरोऽपरः सुरवरो यस्यारुणः सारथिः ।
सप्ताम्भोधिविहङ्गने पटुतरः कल्पान्तकारी विभु-
न्रित्यं सप्तसुतस्त्रिभुक्तरवयुग्मभवाय भूयादितः ॥४॥

अथ दुर्गायाः ।—

अविर्भूताऽत्र माया व्रजमहितवधूसंविधाने निकामं
कंसध्वंसोक्तहेतु विपुक्लितपदाकोटरी या बभूव ।

याऽऽजी मध्वादिदेवप्रलयपरिकरी यादवीप्रपूज्या
सा भाव्या नव्यभव्या भवविभवकरी शङ्करी शङ्करोष्ठु ॥१५॥

अथ श्रीमिलेशस्य :—

दयालयो दानिषु वर्णजेता यो रुद्रसिंहोऽभवदुपचेता ।
वर्मावतारो धृतनीतिभारो वेदान्तसिद्धान्तगृहीतसारः ॥१६॥
तत्पुत्रो नृपतिलकः श्रीभान्महेश्वरसिंह उदितकलः ।
विलसति यस्य चरित्रं स्वल्पे वयसि यथा हरितः ॥१७॥
विनिधाय तदीयाज्ञामुपाहरणनाटिकाम् ।
कुर्वे सर्वमुद्देशमूर्खे रत्नपाणिग्रहं कृती ॥१८॥

अथोपाहरणहेतुभूतं पद्यमाह :—

पूर्वं वृत्तमभूदितो हि सुमते तच्छ्रुतामद्भुतं
भक्त्याराधितशङ्करो बलितरो बाणामुरो भाग्यतः ।
कस्मिन्निर्वाह्यते सहस्रभुजभृच्छम्भोः सकाशाद्वरं
नाथ प्रायितवानितीह बलमूढोऽजनी दीयताम् ॥१९॥

तदुत्तरं शिववाक्यं पद्येन :—

मत्तोऽभूदयमित्यवेत्य गिरिशः प्रोचे वचस्तत्क्षणात्
केतुस्ते हि यदा पतिष्यति तदा बाणामुरास्तत्स्वरुरः ।
कश्चूतिभिर्जबाहुजा सहस्ररा तस्या निवृत्तिर्द्रुतं
षडर्थम्वेहि विधेहि तत्पुत्रममं भाव्या न भाव्या गतिः ॥२०॥

अथ नट्योद्योगः । नाट्यन्ते सूत्रधारः—‘अलमतिविस्तरेण आर्ये ! इहागम्य-
ताम्’ । प्रविश्य नटी सूत्रधारं प्रति वदति—आणवेदु [आज्ञापयतु] ।
सूत्रधारः—आदिष्टोऽस्मि, तद्गीयताम्’ । तत आह नटी—नटरागे,
शिवोद्देशकं मङ्गलगीतं यथा :—

कर डामरं डिम डिमिक वजावधि, गावधि धूमि धूमि गौरिपती ।
बाल बालविधु सन्तत शोभित, तीनि नयन लस तीनि गती ॥

गीत सं०—१

भाल = कपार पर बालचन्द्र सविखन । गती = गति, संन्यासी । लस =

जय शम्भु गती, जय शम्भु गती ॥
अपरख नाच रचधि जगती ॥२१॥
गङ्गा जटा बहु संग रंग कर चोदिस भू — परेत — पती ।
कटिलस नाग भूति तनु लेपित वसन अजिन उर मुण्डतती ।
तहिखन सुन्दर पुरुषपुरन्दर, कहखन उमता शुभव मती ।
सुरमुनि आदि पार नहि पावधि, के तहि जगभरि करण नती ॥
रत्नपाणि मन आनि बसाओल, शम्भुसहित लस पारवती
चारि पदारथ वितरण पारथ, षे हर हरधि एक रती ॥२२॥

अथार्यायाः —

जय जय कंसविनाशिनी । जय यादवकुलवासिनी ॥
मत - जन - मङ्गलकारिणी । कल्याणकरि शरिदारिणी ॥
अतसीकुसुम - विनाशिनी । कामदहन - परिहासिनी ॥
मदनतनय - परिपालिनी । समर सदा जयशालिनी ॥
तुभ माया अनपायिनी । तीनि भुवन गति दायिनी ॥
रत्नपाणि हृदि भायिनी । कह मङ्गल रिनु शासिनी ॥२३॥

शोभए । वसन = मृगचर्मक वस्त्र । उर = छाती पर मुण्डक पंती । पुरुषपुरन्दर
= श्रेष्ठपुरुष । उमत = उन्मत्त । गती = प्रणाम ।

गीत सं०—२

नतजन = प्रणत लोक । अतसी = तीसीक फूल । कामदहन = महादेव ।
मदनतनय = अनिरुद्ध । अनपायिनी = अविनाशिनी ॥

अरिदारिणी = शत्रुनाशिनी । अतसी = तीसीक फूलक सदृश । कामदहन
= महादेवक परिहास कयनिहारि । मदनतनय = अनिरुद्ध । अनपायिनी =
अविनाशिनी ॥

अथान नाटिकायां कस्य कस्य प्रवेश इत्याह पश्येन :—

शम्भोराष्ट्रे समूतोः प्रमथगणवतः, वीरजायाः प्रवेशः,
पद्माद्वाणात्मजाया अतनुतनुभुवविचित्रलेखाऽभिधायः ।
सूतो रम्भोजयोनेरमितबलजुवः साङ्गवाणासुरस्य
तादृश्यस्वाथोऽयकानां हलवलितमनोजातदैत्याचरीणाम् ॥११॥

अथ शिवप्रवेशगीतम् :—

त्रिविधस एक दिन शिव मन भेल । क्रीड़ा करिअ सगण वन गेल ।
प्रथम आदि अनुचर सब सङ्ग । गिरिजा सङ्ग कएल हर रङ्ग ।
कि कहव तखनुक रासक रीति । देव चरित थिक तेहि परतीति ।
सुर मुनि नर पशु सब एक जाति । दम्पति भए रति कर एक भाति ।
कि कहव तखनुक शिवक विलास । छुटि गेल वन भए गेल कंलास ।
ताहि समय ऊषा मन लाए । पहुँचलि सङ्ग सखी मिलि धाए ।
वाणसुता अनुपम रुचि देह । त्रिभवन सुन्दरि कनकक रेह ।
देखि देखि सबहिक अनुपम केलि । यौवनवश आकुलि भए गेलि ।
काम कलपतरु मन गहि सुरत । कोन दिन हमर मनोरथ पुरत ।
से बुझि गिरिजा शम्भक नारि । कहल उपास सदस विचारि ।
माधव धवल दोआदशि पाए । सपन अपन पति मिलतहु जाए ।
से सुनि उषा हरषमय भेलि । सखीसहित शोणितपुर गेलि ।
गिरिजा गिरिस कएल कत रास । पहुँचल जाए तखन कंलास ।
रत्नपाणि भन पहिल प्रबन्ध । आगु कहव गए कति विष वन्ध ॥३॥

अतः परं कि जातं, तत्र दोहा :—

वितल बहुत दिन अवधि सह, उपगत माधव मास ।
आज दोआदशि निशि सपन , गिरिजा पुरब आस ॥१॥

गीत सं०—१

रुचि=कान्ति । कनकक रेह=सोनक रेखा । सदस=एकांतमें । माधव
धवल=वैशाख शुक्ल ।

तखन 'सोयविच यामिनी, ऊषा सुतलिह जाए ।
कोट काभदुति जतिरसिक, केओ जन पहुँचल धाए ॥२॥
रङ्ग रभस सभ भय बितल, ऊषा उठलि चेहाए ।
निया सत्य नहि केओ पुरुष, देखल सङ्ग सहाय ॥३॥
मोहि दूषित कए गेल जन, कि कहव काहि बनाए ।
कोन गति भेटत से रसिक, तादृश रचिअ उपाय ॥४॥
विरह बेआकुलि शानिक रति, जागर बिछरल नाह ।
परम गुपुत नहि वेकत कए, ऊषा पड़लि अथाह ॥५॥
सुमरि सुमरि पहुँ सकलगुण, कोबिल—कल—संलाप ।
दए निधि विधि हरिलेल पुनु, अन्तर करवि बिलाप ॥६॥
जत जत अछि पारचारिका, ताहि केओ न गेआनि ।
कहव काहिसँ सपन गति, के केरि मिलति 'सेआनि ॥७॥
अधिक 'पुराकृत पुण्यतह, भौरि कएल वरदान ।
अचल विचल नहि जानि मन, तथु अव करिअ वधान ॥८॥

अथातः परमुषा निर्दोषा दोषाकरमुखी विदुषी विदितरहस्यां वयस्याञ्चित्र-
लेखामाहूय स्वाप्ति कोदन्तसन्तानं हस्ताभिर्पं वभाषे । पटुवरा नटी
प्रकटयति तद्वृत्तं सुरगिरा भीतेन गुरुजरीरग्रे :—

जीवनं मम रक्ष रक्ष न चाप्यथा विलगामि ।
कस्मैत्य विधाय सङ्गमितो गतो हि वदामि ॥
शिव शिव !! हुता विधितया नत्ता साऽशरणेव ॥ भ्रूवम् ॥
दग्धमेव जरीरमितश्मवेहि तद्विरहेण ॥
आलि ! कि मम तं विना सुवमाऽसमृद्धिः भरेण ॥

१—कोला । यामिनी=राति । दूषित=कान्ति ।

२—सेआनि=सखानी ।

३—पुराकृत=पूर्वक कएल । वधान (विदेशीशब्द)=व्याख्यान, सविस्तर
कथन ।

त्वं विधेरति सुष्टिः कुरु वि तल्लिखाशु करेण ।
 पट्टके विवृषाधिविग्रहमादरेण वरेण ॥
 वर्त्तति मनसीह मे रसिको यदा नयनेन ।
 तं विलोक्य वदामि हेमखि ! नाश्रया नयनेन ॥
 दूषिताऽहमनेन चेतिह मैतरं कलयामि ।
 धम्मन्तो मम रक्षणञ्च यथातथा हि लयामि ॥
 किकरीवत् ते भवामि चरामि क्षतिभरेण ।
 तावदेव ममाखिलं सखि जीवनं रमणेन ॥
 एवं सखीजनतावराऽसि नता च सर्वजनेन ।
 जीवनं मम ते करे सखि किं तदा कथनेन ॥
 रत्नपाणिमवेहि तं रसिकं गुणप्रकरेण ।
 दोडशाब्दवयोगतं खलु मोहनं परमेण ॥४॥

—अष्टमदमिदम् ।

अथोपाऽऽकाशवाक्यं निशम्य चित्रलेखा विशेषादरादाह पद्याभ्याम् :—

तिष्ठन्तु पान्तु वा प्राणास्तव कार्यानिरोधतः ।
 आज्ञावशाऽन्यायेषां विद्धि मां किङ्करीमिव ॥१२॥
 लिखन्ते प्राणिनस्सर्वे मया पट्टेऽगुरुपतः ।
 दृश्यतां सर्वचिह्नेन तेषु को रतितस्करः ॥१३॥

अथ सर्वेषामयमाशयः । म च भाषागीतेन लिख्यते :—

माघवशुक्ल तीथि द्वादशि धिक ऊषा से मन लाए ।
 गौरी वर-निधि बूझि सौधबिच, एकसखि सुतलिह जाए ॥
 कोटि-काम-दुति युवा रसिक जन, उषा सेजपर आए ।
 रङ्गरस कत भेल सपन बिच, ऊषा उठलि चेहाए ॥
 जागर नागर क्यो नहि देखल, तखन कएल मन खेद ।
 काहि कहव तत सपन-चरित जत, क्रिया सत्य नहि भेद ॥

गीत सं० ५—माघव=वैशाख । सौध=कोठा । दुति=चमक । जागर=

असमय समय रमित भए नागर, मोहि दूषित कए गेल ।
 काहि कहव हम विरह बेआकुलि, बिधि सुख दए हरि लेल ॥
 गुप्त कथा हम कहव काहिसँ, कहइत होअ अतिआज ।
 गौरि देल धर गुप्त न राखिअ, बेकत करिअ हम आज ॥
 कहल सान-गति चित्रलेखासँ, जानि सखी निज प्राण ।
 बिपति अथाह पड़ल छथि मानस, तुअ विनु के कर जाण ॥
 सुनि सभ चित्रलेखा एह भाखल कहिअ सखी मन चाह ॥
 हमर अवयविच जान तरह नहि, केहन देखल धनि नाह ॥
 तखन विचारि बहल ताणामुर—तनवा जत जत भेल ।
 भान तरह नहि बुझव रसिकजन दए विधि निधि हरि लेल ॥
 विधितह चरित अधिक तुअ हेसति, के नहि जग भार जान ।
 तीनि भुवन जन लिखन सहज तुअ कर धर पट्ट समान ॥
 की हम कहव रहव सुदिनि भए, करव सकल तुअ काज ।
 सुरगुह हमर तोहर कर हेसखि, तकर मोहि नहि लाज ॥
 विरह-दवाकुल मोर जिव चातक, रहए न पल एक धीर ।
 तुअ वश हमर रसिक अवलोकन, से मोहि स्वातिक नीर ॥
 तन्हि विनु विकल हमर सुखमा तनु, धन जन राज समाज ।
 राख राख मोर जीवन हेसखि, पट्ट दरशन दए आज ॥
 उषा विचलमन देखि ददामय, चित्रलेखा भए गेलि ।
 कहल उपासँ दीअ प्राण जनु, होएत फेर तोहि केलि ॥
 आतक अवय एक तुअ वश हम, सुदिनि जानव मोहि ।
 लिखव पट्ट हम ताहि देखव पट्ट, कि कहव सहचरि तोहि ॥
 रत्नपाणि भन मन गुनि हे घनि, गौरि कएल वरदान ।
 पुरत मनोरथ निवचय जानव, एहि तरह नहि जान ॥

जमल पर । नागर=चतुर प्रेमी । अवय=शक, करवा योग्य । तरह=प्रकार । सुदिनि=सेविका, भनसिया । सुरगुह=बृहस्पति । विरह-दवा-कुल=विरह-रूपी दवाकुल सँ दवाकुल हमर प्राणरूपी चकवा पक्षी, ई पक्षी स्वाती नक्षत्रक मेघक बृन्दसँ गुप्त होइछ, से जल हमरा लेल प्रियदर्शने धिक । सुपमा=परम शोभायय ।

अथ चित्रलेखा पट्टुं लिलेख । भाषया दण्डकच्छन्दः—

लिखल तहिसन चित्रलेखा जगत सबहिक नंश ।
सभ नकारल तखन देखल जतए जनमल कंश ॥
देखि यदुवरवंश हरमित ततए कृष्ण अनूप ।
तन्हिक आठक कुलक पालक मदनतनु अनुप ॥
मदन-बालक जखन देखल कहल मन गुनि, "आलि !
पुरुष-पारथ देखि कृतारथ भेलहुँ सभ गुनशालि ॥
हमर मानस हिनक वश भेल तेहन होअ उपाय ।
पहुंसमागम देखि जागर-समय मीलिय धाय ॥
हमर मन अलि एहन व्याकुल कहब को सखि तोहि ।
आज नहि यदुराज आश्रय तखन की जग मोहि ॥
तोहर चित्र चरित्र विधि तह के न जग भरि जान ।
हमर प्राणक प्राण तुअ कर कहब की सखि आन ॥
रत्नपाणि समात यदुवर मिलब निशि मोहि आज ।
तखन जानब हमर जीवन सकल सभ मनकाज ॥६॥

अथातः परमुखाविलापसाकर्ष्य चित्रलेखा वदतिस्म—

"हे सखि प्राणप्रलभे ! भवयुक्तमिदमसाध्यं प्रतिभाति । यतः सिन्धु-
तीरे विनाशा वायोरप्यगम्यादां द्वारकानगर्यां प्रचण्डमार्त्तण्डालण्डप्रतापो
जिताखण्डलो महीमण्डले सपरिवारः श्रीकृष्णो वसति । तत्र जूनेऽष्टम-
खण्डेऽतिमण्डले धाम्नि बहुवपस्यै रहस्यादिकं कुर्वन्निरुद्धस्तत्रप्रा नृत्यादि-
कमवलोकयन् गोलोक इव विहरति । तत्रावलावलाबलाहं, हे सखि !,
कथं मच्छामि ।"

इतिश्रुत्वा हताशा बाणपुत्री जगादः—

"हे सखि ! त्वमप्येवं वदसि ? त्वदस्या का मम सहायभूता ? न कापि ।
तहि तव पुरस्तादेवाहं प्राणोस्त्यक्षयामि ।"

गीतसं०—१

नकारल—'नहि' कहल । मदनतनु—कामदेवक देह सन । प्राण—
रक्षा ॥

इत्युपावको निशम्य सदया चित्रलेखाऽऽहः—

"हे सखि ! मा जहीहि प्राणान् । तवार्थमहं ब्रजामि । परन्तु मद्बचनं
शृणु ।"

अथ दोहाः—

तोहर मनोरथ बुझि सखि, गौरि कएल वरदान ।
'अनल' शीत चल अचल भव, एहि तरह नहि आन ॥६॥
न कइ मलिन मन हे सखी, सुमरि गौरिपदकञ्ज ।
स्वरित समीहित सिद्ध भए, भेटत मानस रञ्ज ॥७॥
जखन जवन सखि देवगण, पाओल विधिवश खेद ।
तखन कृपाकए शङ्करी, कएल सकल दुख छेद ॥८॥
जननि-चरण हिअ राखि हम, जाएब माधवगेह ।
प्राण-प्राण मोहि नहि सुखद, कारण सखि तुअ नेह ॥९॥

अथ चित्रलेखोपाविलापनिशम्य भाषागीतेनोत्तरमाहः—

सदचरि तोहर वचन सभ सुनि । क्षुब्ध^१ हमर मन धनि सभ गुनि ॥
सिन्धुतीरे अलि माधव भवन । अंगणित योजन कठिनहि गमन ॥
जे नहि भए सक तस तुअ चाह । कोन गति मदनतनय तुअ नाह ॥
जगतविदित माधव शुभधाम । सभ गुण भरल द्वारका नाम ॥
रखि विधु पवन हुकुम लए जाए । के धिक आन लाख अकुलाए ॥
रक्षक-वृन्द भरल सभ ठाम । बिना हुकुम नहि मानए साम ॥
आठम खण्ड रहयि अनिरुद्ध । हमर मन धनि परम विरुद्ध ॥
हम अबला जाएब कोन भाति । सावधान सभ रह दिन-राति ॥
रत्नपाणि भन होएत उपाय । हिअ धर माधव जगत-सहाय ॥१०॥
एतदुत्तरमाह भाषागीतेनोपा । दण्डकच्छन्द—

सखी-भाषण समल ऊप । परम आकुलि भेलि ।

आन-के मोहि होत तुअ सम करब की हम केलि ॥

१—अनल—आगि शीतल भए जाएत । समीहित—अभीष्ट । रञ्ज—खेद ।

माधवगेह—कृष्णक घर ।

२—क्षुब्ध—क्षुब्ध । आश्रयित । मदनतनय—अनिरुद्ध ।

आव की हम प्राण राखव मिलव नहि पहु आज ।
 देव-वञ्चित भेलहुं हे सखि तखन की धनि लाज ॥
 बाणतनया प्राण तेजव तेहन निश्चय भेल ।
 बुझि में मन चित्रलेखा अवन प्राणद देल ॥
 एखन जनु सखि प्राण तेजहु हमर यावत प्राण ।
 गौरि तोहि वर देल सहचरि होएत निश्चय प्राण ॥
 सुमरि दुर्गाचरण-सारम भजिअ मानस लाए ।
 पुरत हे सखि कामता तुअ गौरि भक्त सहाय ॥
 देवतासभ विपति पड़ि गेल तखन कएल विचार ।
 भजिअ सभ मिलि देवि दुर्गा आन सह परकार ॥
 तखन सरसरितीर गएहु सखि अराधन भेल ।
 छुटल सभ दुख मोदमय भए भवन निज सभ गेल ॥
 एहि उत्तर चित्रलेखा कएल दुर्गाभक्ति ।
 भगवतवाणी तखन भए गेल काजसाधनसक्ति ॥
 रत्नपाणि विचारि भाखवि मुनिअ देवि विचार ।
 सतत दुर्गाचरण सेविअ आन नहि परकार ॥२॥

अथ चित्रलेखा दुर्गा स्तोति पद्येन :-

जय जयकारिणि भव-भय-हृदयिणि, गिरिश-विहारिणि, दौलसूते ।
 महिषासुरमर्दिनि, ललितकवर्दिनि रणभूमि नर्दिनि धोरस्ते ॥
 निगमागमसारे, मणिमयहारे, महिमापारे, सद्गुते ।

सकलीकुरु कामं जननि निकामं पदमभिरामं नोमि गते ॥२॥

अथ स्तुत्यन्तरमाहात्म्यावाणी बभूव, "गच्छ, आर्ये ! कार्यमिद्विद्वत् भवि-
 श्यती" -ति निश्चय चित्रलेखा गुप्तवेणा द्वारकामभिषक्तिता । मनोजवा
 सा सिन्धुतीरमगमत् । अत्र भाषाशीतम् -

चित्रलेखा चललि मन घए गौरि-पद-युग-कञ्ज ।

गुप्ततनु मन-वेग-सम-गति समय शुभ भयभञ्ज ॥

१-गुप्ततनु=गुप्त देह कए । अमरावती=इन्द्रपुरी ।

घाए जाए समीप सिन्धुक देखल माधन-धाम ।
 छ'णि जति अमरावती लस द्वारका जस नाम ॥
 सिन्धुतीर सधीर-मानस डाङ नारद-कृपि ।
 सतत भगवत-चरण-सेवक माडि जीवधि भीखि ॥
 भावि बुझि छ'णि आधि कीदहु ओतए दर्शन देल ।
 कहत के विअ भावि भेलहि तेहर पटता भेल ॥
 रत्नपाणि विचारि भाखवि करहु जनु धनि खेद ।
 गौरि-वर धिक अचल भव भरि ताहि पड़त न भेद ॥१०॥

अथ कीदृशं नारदं चित्रलेखा दृष्टवती तत्र भाषया गीतम् । बराहोदारी :-

२-यामिनि कामिनि देखल सिन्धु । एकसरि आन केओ नहि बन्धु ।
 ततए देखल धनि नारद-कृपि । हरि-सेवक जीवधि कर भीखि ।
 अजुन वसत तिलक उपवीन । हरि-पद-ध्यान करधि दिन नौत ।
 दीपित देह तपनमय भाय । गमत जलिक सम धरणि-अकास ।
 सुननु विभूति कमण्डलु धारि । पाकल केश वयस गुगचारि ।
 विधिमुत यतिवर गिरिशक बन्धु । सभगुण अनुपम कलहक सिन्धु ।
 रत्नपाणि मुनि दर्शन देल । पुरत मनोरथ से मन भेल ॥११॥

तत्र चित्रलेखा दृष्ट्वा मुनिराह - "अये का स्वमेतादृशान्धतमसे उद्दिग्धचिह्नीय
 समागताऽसि ।" इति निश्चय सा मुनि प्रणम्याह, - "जगज्जनीन ! हरि-
 भावतलीन ! देवर्षे ! नारदमुने ! चित्रलेखाभिधाऽहमप्यरास्तेष किङ्करी
 भवामि । यदर्थमागताऽस्मि तद्वदामि" -

अत्रकोहा -

पुरुष चरित जेत भए बितल मुनिमें कहल बुझाए ।

मुनि मुनि हवित चरित सम बिजह पड़ल लवाए ॥१३॥

२-यामिनि=रातिमे । कामिनि=सुन्दरी । अजुनवसत=अजगर वस्त्र ।
 तपन=सूर्य । गिरिशक=शिवक ।

अथ मुनिराह दोहा—

कठिन मन विच द्वारका समतल रक्षकवृन्द ।
विनु परिपक्व न सञ्चरह भाविनि पड़वह फन्द ॥ २॥
पारिजात - तरु - हरण - रण - समय पराजय पाए ।
बुझल इन्द्र जग से सबल यदुपति जाहि सहाय ॥ ११॥
सम्प्रति बाणासुर सबल गौरीवर - वर पाए ।
हरि - बाणासुर - समर हम भावी देखव आए ॥ १२॥

अथाथ भाषागीतम्—

एतेक राति अतिअन्ध तमस विच आईल छह एहिठाम ।
आकुल - विच तोहर बुझला पड़ भिकिह केअ किअ नाम ॥
पुरुष चरित सभ कहल मूनि सौ तखन कहल निज नाम ।
सुअ पद - कमल - युगल अवलोकल आब पुरत मनकाम ॥
सकल कथा सुनि मन मुनि नारद उत्तर कहल बुझाए ।
की बुझि सोह द्वारका चललिह के तोहि देलक सुझाए ॥
तोहँ अबला असहाय तखन फेरि जएवह कृष्णक ग्राम ।
बायु गमन विनु हुकुम जतए नहि रक्षक रहु सभठाम ॥
सुरतसहरण पराजय ह्मश्रक तखन सबल के आन ।
तन्हिक आगु बाणासुर के थिक जौ पओलक वरदान ॥
नारदवचन सुनल धनि मन दए तखन कएल बड़ खेद ।
की हम करव कहव की सखिसौ नहि जानल हम भेद ॥
रत्नपाणि भन करिअ समत मन न करिअ आशा - भोग ।
गौरिक वर नहि चलए जगत भरि आगु देखव गए रङ्ग ॥ १३॥

अथ नारद प्रति विप्रलेखा विजयिच्छुलयति भाषागीतेन—

सुनिष सुमन भए हे हे गोचर मन लाई ।
सदय - हृदय भए हे हे मुनि होइ सहायी ॥

१—युक्ति । २—प्रवेश करहु ।

पुरिअ मनोरथ हे हे शरणागत जानी ।
भजव हृदय भए हे हे जानव सत बासी ॥
कणक चरित हठ हे हे नहि सुझल होवे ।
करिअ रोष अनु हे हे राखिअ मुनि तोषे ॥
बाणासुर मोहि हे हे मुनि प्राणसमाने ।
करिअ तेहन मति हे हे तसु राख पराने ॥
माधव - सुत - सत हे हे अनिरुद्ध बखाने ।
करिअ हमर वरा हे हे फल जीवक दाने ॥
रत्नपाणि भन हे हे धनिसुनु चित लाई ।
तोहर विनय सुनि हे हे मुनि होएव सहायी ॥ १४॥

अथ विप्रलेखा-सवितयमीत श्रुत्वा सकृन्तो नारदो गीतमाह भाषया—

सुनु सुनु भाविनि न करिअ खेद । हमर वचन मन मानव वेद ॥
तामसि विद्या लएकहु जाह । छुटत तोरित तोहि विपति अथाह ॥
तोहि सभ सुसत जत जग लोक । तोहि नहि देखत न करिअ शोक ॥
तोहर दयावश कहल उपाय । हरि धरि मानव पड़वह माए ॥
हरि अनिरुद्ध गुप्त लए जाद । काजसिद्धि धनि जगत सराह ॥
गुप्त रहन नहि परगट आन । हरि बाणासुर - समर निदान ॥
आओव हमहु देखवअनि युद्ध । सुनु धनि अखन लड़त अनिरुद्ध ॥
मुनि मुनिवचन कएल परनाम । पड़वह जाए बीच हरिग्राम ॥
आठम खण्ड जतए अनिरुद्ध । रक्षकसौ सभतल अवरुद्ध ॥
ततए देखल गए कतिविध नाच । मुनिहुक धर्म जतय नहि बाँच ॥
कथक आदि सभ गीत अलाप । तन्मय जत छल लोक कलाप ॥
अनुपम देखल रतिसुतधाम^१ । तीनि भुवन राजित जसु नाम ॥
कतिविध सखा करए फल हास । ततए कामसुत^२ करए विलास ॥
तेहन अवस्था देखिकहु गेलि । हरि अनिरुद्ध हरखमय भेलि ॥

१—अनिरुद्धक घर । २—अनिरुद्ध ।

आए गगन-पथ रतिसूत-अङ्क । कएल परस्पर कथन निशङ्क ॥
लए गेल पलहि उपा-रति-नेह । कहल ममुकि लिअ पति अति नेह ॥
रत्नपाणि भन कि कहब चरित । हरि-कहना भए गेल अति स्वरित ॥

अथ चित्रलेखा बाणसुता प्रत्याह पद्येन—

गृहाण रतितस्करं मदन - कोटि - शोभाकरं,
मनोभव - सुतं सुतं कमलभू - मनो - निम्मितम् ।
रसायनमनालसं कलितसाहसं निभयं,
विशेषि रतिसङ्गरं रहसि माधवे माधवे ॥१४॥

अस्याशयो भाषागीतेन लिख्यते यथा—

मदन-तनय तुअ हरिकहु देल । तामसि विद्याबलसँ भेल ॥
सखि हे समुसि लीअ रति-बोर । साहस सकल भेल सभ मोर ॥
देख रतीपति-घत^१ सभ रूप । हरि-सुत-सुत^२ धनि जगत अनूप ॥
विधि रचना मानस जनि कएल । सार बनाए पड़ल छल घरल ॥
सभसुण आगर नामर तोहि । ऐल विधासा त्रिभुवन जोहि ॥
काम-कलाकोविद तुअ नाह । निभय साहसि रस-भर चाह ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज । चलब समारि नियाहब लाज ॥१५॥

अथोवाह पद्यम्—

घन्यासि रत्नं वयस्येऽविदितगतितयाऽसाध्यकर्मप्रवीणा,
मरप्राणबाणकत्री हरिसदनगतानङ्गतामुद्गता सा ।
तामस्या विद्यायाऽहोऽगजितहरिदराऽनङ्गपुत्रं कर्तुं
कि वक्तव्ये तवाग्रं रघुपकृतवशा क्षुरकदासी सवाहम् ॥१६॥

अस्य भाषो भाषागीतेन—

तो हे घन्या धनि त्रिभुवन एक । तुअ करनातह निहल टक ॥
अविदिनहुदय हरिक गह जाए । हरिसुत सुत हरि आनल घाए ॥

१—संकड़ो कामदेवक समान । २—कृष्णक पुत्रक पुत्र ।

साहस एहन करत के आन । हमर बचाओल सहचरि प्राण ॥
तामसि विद्या मुनिसँ पाए । कएल सिद्ध सभ मानस लाए ॥
तुअ उपकार कहब कत आज । हम तुअ सुदिन^१ ताहि नहि ब्याज ॥
रत्नपाणि भन तहिसन नेह । न गुनिअ प्राण बाण निज देह ॥१६॥

अथ सार्वज्ञातगर्वा विदितरहस्या वयस्या बहिरुपगत्य विविशुः । अथ रहसि
व्यात्मजोक्तं भाषया गीतमनिरुद्धं प्रति—

कि कहब यादव तोही । दए सुख आदि अत निरमोही ।
तुअ विरहानल-दापे^२ । नीरम दाह^३ अनल तनु तापे ।
विशिवश तुअ पुनु सङ्गे । पुरत मनोरथ समित अनङ्गे ।
संशय पड़ल पराने । पहु तोहि देखि देखि भेल मोर बापे ।
रत्नपाणि पहु लाई । विधि रचना फेरि देल तुलाई ॥१७॥

अथोवा प्रत्यनिरुद्धो भाषागीतमाह—

कि कहब कामिनि आज । सपन अपन गति कहइत लाजे ॥
न बुझल अन्तरलोने । जाएर धनि तुअ भेलहुँ अधीने ॥
जवहि^४ मानस मोही । असह विरह देल कि कहब तोही ॥
सपन देखल तुअ रूपे । एहुवन देखिअ कला अनूपे ॥
आब उचित रति-सारे । करिअ कमल-मुखि प्रेम-पसारे ॥
भए गन्धर्व-विवाहे । पुरओ मनोरथ अपतिअ हारे ॥
रत्नपाणि भन धीरे । रमिअ हुइ मिलि कए मन धीरे ॥१८॥

ततः कामशास्त्रकलाकोविदोऽनिरुद्धो गान्धर्वं विवाहं विधाय सुषमावधिभूतया
बाणसुतया रेमे । अथ रतिसमयस्य गीतं भाषया । वरदकच्छम्भः—

तखन दम्पति वसन फेवल, हार कएलन्हि दूर ।
अङ्ग अङ्ग अनङ्ग सुखमय भेल मानस पुर ॥

१—सुदिनि, पाषिका ।

२—विरहली आगिक ज्वाला सँ । ३—सुख। एल काठ जकाँ आगि देहकेँ जरबेछ।

सुरति रति विपरीत कणविध, कएल गुण दूगबन्ध ।
अमृत सखमय भेल तनमय दूह लोचन अन्ध ॥
तखन देखल सतनु अतितनु कएल मानस चेत ।
मधुर मधु पिबि आगु ताकल फेरि के सुख देत ॥
रतिक सङ्गर भङ्ग कएलन्हि मधुर लाघल बोल ।
तखन विधु-मुखि बिहुँसि बाजलि एकक बोल अमोल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखवि कएल समुचित काज ।
चलब आव समावि दम्पति सभ बचावए लाज ॥१२॥

अथ रतिसुखानन्तरं मदनतनयो वसन्तवर्णनं भाषागीतेन करोति । यथा—
देख देख भाविनि सरस वसन्त । बड़ तसु भाग निअर^१ जसु कन्त ॥
परिमल मन्दर मलय समोर । चलए न पाइ भार गति धोर ॥
कोकिल कलरव पञ्चम राग । उचित समय धनि अति अनुराग ॥
जगमग यामिनि चान विकास । विधिवश दम्पति करए विलास ॥
तरु तरु मधु पिब मधुकर-पुञ्ज । भमए रमए धनि कुसुमित कुञ्ज ॥
देखु सरोवर सारस सोभ । कि कहब देखि होअ निधुवन^२-लोभ ॥
नागर नागरि समुचित पाए । लाख रमित नहि रसिक अघाए ॥
रत्नपाणि हरि उपगत जाहि । सभ सुख जानब समुचित ताहि ॥१३॥

अथ पुष्पवाटिकां दृष्ट्वा पुनराह गीतं भाषया—

कतहु बेलि चमेलि किशुक वकुल चम्पक शोभही ।
मदन बकहुल कनक पाइरि ततए रम अलि लोभही ॥
सरल शाल तमाल कुंकुम कुमुद लस करवीरही ।
कहब कत हम कुसुम कतविध देखि नहि रह धीरही ॥
देखु उपवन परम शोभित कोकिला कल गावही ।
चलिअ कामिनि काम कोमुक करिअ मानस भावही ॥

बहए माखन मलय-सम्भव कुसुम-सीरभ संगही ।
कुञ्ज गुञ्जत पुञ्ज मधुकर उपजु काम तरंगही ॥
चमक चानक चाननी निस रमए युव-जन भावही ।
मकरकेतुक हेतु निधुवन^३ दीस मानस धावही ॥
देखि तुअ तनु अनुप शोभा धीर नहि रह आजही ।
रमय सन्त वसन्तकृतुवश कतए निबहए लाजही ॥
रत्नपाणि रमेश कामद तखन जीवन सारही ।
हास कइ परगाथ आनन दूर कइ हिय हारही ॥१४॥

अथ रत्युत्कटेचमवेक्ष्य हृच्छयवशादनिरुद्धं प्रति बाणजा तदुत्तरमाह भाषागीतेन—

तोहि हम पाओल विधिवश कन्त । जानब बाजम सतत वसन्त ॥
अति नहि चाहिअ पहु सभ काज । धरज धरिअ निबाहिअ लाज ॥
तनु अति तनुक अतनु तनु जोर । तुअ सङ्ग पाए छुटल दुख मोर ॥
त्वरित उचित नहि निधुवन चाह । के अग महित कुसुम सराह ॥
धरज धरिअ करिअ नहि रोष । दम्पति जानब एक मति तोष ॥
देखिअ जखन जेह जसु रीति । तेहन करिअ पुनु निबहए प्रीति ॥
मानिअ मर कहल मन लाए । सदय हृदय भए रहिअ सहाम ॥
रत्नपाणि भन मन अवचारि । करए काज बुध समय विचारि ॥१५॥

अथ निश्रातुराणां यथा न शरयाभूमिविचारस्तथा कामातुराणां न समयविचार इति समीक्ष्य बाणपुण्या मानमकारि । तद्विषये दोहा—

रति लोलुप पहु देखिकहु तखन कएल घनि मान ।
आरत लोचन मोन गहि बंसलि विमुखि निदान ॥१७॥
तेहन तरह देखि रति-तनय^४ अति आकुल मन भेल ।
दृष्टिकूट-तनु गीत कहि मान-दोष हरि लेल ॥१८॥

अथ मानमञ्जनश्रीतमाह—

उचित सोरित^४ रसदाने ।

असमय समय मान नहि चाहिष विकल करए पचवाने^५ ॥

विनु कर मधुकर पान यतनपर दए हलु रजनि^६ बिहाने ।

तन अरि ता अरि भवन सुतानन से किअ करह मलाने ॥

खग पति पति सुत अरि अरि सुन्दरि विधुहित^७ लोचन राजे ।

११ हरि हरि, हरि-सुत-तिअ १२ दिअ माननि ताहि न करिअ देअजे १३ ॥

१४ गिरधर अघर पयोधर भूषण तापर मोहिमे हारे ।

जनि धर १५ गिरधर उपरसे लम्बित विम्बित सुरसरि-धारे १६ ॥

१७ गगन गुणित कए आगमयश कए कामिनि वीरल मोरा ।

रत्नराणि भन तलेन उचित कोन गिरि १८ सम गरज निहोरा ॥१९॥

अथ वर्यनुरागवशादुपा स्वयं गीतमाह—

तेजल मान हम तुअवश रे, न करिअ पहु रोये ।

प्राण-त्राण मोहि तुअ कर रे राखिअ परितोये ॥

कत हम देव अराधल रे, पुअिल फल मोही ।

आए तुलाफल विधिबश रे, पति पाओल तोही ॥

करिअ काज पहु समुचित रे, नहि पाविअ खेदे ।

हमर कहल हिय राखव रे, जानव पुनु येदे ॥

४—स्वरित, जट । ५—कामदेव । ६—हाथ-रहित भ्रमर । ७—रति विताय भोर कम देख । ८—गालक शत्रु आगि, तकर शत्रु जल, तकर भवन समुद्र, तकर सुत चन्द्रमा, तत्स्वरूप आनन अर्थात् अपन चन्द्रमुखके ।

९—पक्षीक पति महद तनिक पति विष्णु तनिक सुत कामदेव, तनिक शत्रु महादेव, तनिक शत्रु कामदेव, तत्सदृश सुन्दरी । १०—चन्द्रक समान हितकारी होतल । ११—हाय हाय । १२—विष्णुक पुत्र कामदेव, तनिक स्त्री रति अर्थात् समागम । १३—लाय । १४—पर्वत रूपी देहक उपरका भागक नीचा, अथवा गिरिधर कृष्ण अर्थात् कारी स्तनक अग्रभाग ताहिसे नीचा स्तनक गहना । १५—उपरका भाग । १६—संगीत धार । १७—आकाश अर्थात् शून्य से गुणा कए हमर कोशल के शून्ये शून्य । १८—पर्वत सन भारी ।

रसमय समय पाए पुनु रे, कह पहु मुखसारे ।

मदय नृदय मए जानव रे, किछु करिअ बिचारे ॥

मदन-मनोरथ पूरल रे, बोलल अभिसारे ॥

विधिक चरित-गति के बुझ रे, जत प्रेम-पसारे ॥

रत्नराणि भन गन गुनि रे, देखिअ हिय लाई ॥

केहन असम्भव सम्भव रे, बिधि देख तुलाई ॥२४॥

अथैतिमल्लेख समये बाणान्तपुरे विचित्रचित्रादिमण्डिते कुमारीखण्डे उपनि-
रुद्धयोः उत्तरपरं रसकथालापकलापं निशम्य रक्षादक्षा रक्षका राक्षसादयश्च-
कितचित्ता बभूवुः “आद्यवर्षमाश्चर्य्यं कुनाप्यपरिचितेन साकमालापकलापमुपा-
करोति । गगनकुसुममिव प्रतिभाति” । ततो भनसीतिविचित्रस्य सगर्वाः
सर्वे ते बाणसमीपजङ्गमुः । अथ गम्वा ते तं जगदुः “हेदेव । सुरगर्वास्त्वर्वाकार-
काखण्डप्रताप । मारीण्डसूक्तं ! यशोजितराकारमणकीर्त्तं ! किं वदामो वयम् !
कुमारीखण्डे कोऽपि युवोपमा साकमालापङ्करोतीति निश्चित्य वयमागताः
स्मः । यथाज्ञा तथा कुर्मः ।” “रे यूयं किं वदशालीकम् ।” “प्रभो ! सत्य-
मेतत्” । “किमयं मानम्” । “पुरुषबाणनुमानञ्च ।” “कोऽयमेत्यासाध्य-
कर्म्मिकरोत् ? भवतु नाम कोऽति । स आलतायी हस्तव्य एव । कोऽयं
विचारः ।” अथैति प्रभोराज्ञां गरीयसीमवमत्य शस्त्रास्त्रधराः सर्वेऽनिरुद्ध-
निधने कुतनिगर्व्वी अनिरुद्धसमीपमाजङ्गमुः । ऊचरन्ति ते — “कस्त्वमनर्थक-
रिम्नबाणतोऽसि । रे रतिचीर ! गतापुरिष प्रतिभाति । बहिरागच्छ ।
तव मुखं पश्यामः कीदृशोऽसीति ।” बाणासुरवधरक्षक-वचो निशम्य उवाऽश-
निपातमेवामन्यत । किञ्च वदतिस्य—“हा हतास्मि । हे विधे ! रंग एव
भंग-कृत” इत्युक्त्वाऽनिरुद्धं यथाभ्यामुपदिशति । प्रथमं यथा—

एकस्वयं बाल एवाविदितरजगतिः का घृतिरते बलं वा,

किं शीर्यं बलभाजी स्वजनधिरहितः किङ्करिष्यत्यन्ताधः ।

आहूता बाणदूतास्तव निधमपरा भूरि गज्जस्यमाश्रयाः,

किं कुर्व्वं हा हतास्मि त्वदरिषयलये जीवने जीवनं मे ॥१७॥

किञ्च,

का लज्जा मञ्जुशया किमिह मम सुखं त्वां विना के च लोकाः,
शोकाकाराः समस्तास्तदिह तव पुरस्सक्तजीवा भवामि ।
कस्तातः का च माता भवति कुलवधूनामये ! देवमेकम्,
स्वामी यो न भवति दिशति किल भवे कोपि नैतादृशोऽप्यः ॥१८॥

अथ गीतञ्च—

अब मोहि जागर सपने समान । तुअ विनु जीवन विपति-निदान ॥
अब मोहि उचित अनरु परवेश । पहुक आगु तिल बदलए वेश ॥
हमरहि चरित भेल एत दीप । की हम कहब तखत विविरोष ॥
कएल गुप्त हम परगट भेल । घेरज हमर सकल दुरि गेल ॥
गिरिजा - वरक छएल हम आस । क्षणहि पुरित भेल सकल बिलास ॥
की दुखि राखब जिवक भरोस । लाखनि कौज भरल सभ रोस ॥
रत्नपाणि हरि घर चित लाए । पुरब मनोरथ अपनहि आए ॥२१॥

अथेनदुतरमुधा प्रति अनिरुद्ध आह वद्याभ्याम्—

कृष्णो देवि विनामही मम, पिता प्रद्युम्ननामा भवे,
मायावी बलभूत कृताञ्जिनिलयो विरुधाततेजोभवः ।
कंसस्या निहताश्च बाल्यसमये ये वा रणेऽप्येऽसुरा,
देवेशोऽपि जितो हितोऽपि कलहे भू-पारिजातागमे ॥१९॥

किञ्च,

सिंहादाप्तजनुर्न सीदति भवे वन्दे द्विपानां प्रिये ।
क्षेदं मा कुरु यामि सङ्गरभवं ताहं जनः प्राकृतः ।
सङ्कष्टे समुपागते विधिवशाज्जानीहि तारागती,
तादयोरोहणतत्परी गुह्यतरी कोऽयं हि बाणामूरः ॥२०॥

अथानिरुद्धो गीतमप्याह नृमिरोषां प्रति, वद्या—

बाणसुता न करिअ मन बास । घेरज घरिअ पुरत सभ आस ॥

नारद मुनि बुझल सभ चरित । हरिसौ जाए कह्य हुनि त्वरित ॥
हम गए लक्ष्म करब मन पुर । आहुत भए नहि बलमए सुर ॥
मायावृद्ध बुझल नहि मारि । ताहि कदाचित हमरो हारि ॥
विधिवश तेहन होएत जे बेरि । कुष्णागमन सखत नहि देरि ॥
अबितहि कृष्ण करब परकार । निश्चय जानब हमर विचार ॥
मोहि अनु रोकिए जाएब रङ्ग । त्वरित करब असुरक बल भङ्ग ॥
दए विरवास चलल अनिरुद्ध । दश गुण देह बहन अनि कुद्ध ॥
रत्नपाणि मन कुष्णक आस । तखन कहाँ जग फकरो बास ॥२६॥

अथ महाकाव्यो भूत्वा गृहीताक्षिरानिपात इव निशाचरचमूचयेऽपस्त ॥ अथ
दीर्घाः—

कुष्ण-चरण मन शरण कए, बल बिध कएल प्रकाश ।
अनि कानन-बिच देववश, उपगत प्रलय-हुताश ॥१९॥
देखितहि रिपुबल चकित-चित, भयतहु सकल उदास ।
“दम्तावल बलसिंह लखि, बिचलए बलक हरास” ॥२०॥
“एकत कतिविध उरगमण, गरल त्रेशापित देह ।
“विनतामुत लखि आशवश, के न जाधि फणि मेह ? ॥२१॥
“असि-विधूत-चय चमकि जनि, वलमन तनु भए गेल ।
“मुदित-लोचन असुर-जन, बास-ह्रास तनु भेल ॥२२॥
एहन पुरुष नहि दृष्टिपथ, अति साहस परधान ।
पवन गमन नहि हुकुम विनु, ततए समागम शान ॥२३॥
सभ मिलि ततमत की करह, करहु सबहु संग्राम ।
जनन मरण नहि अपन वश, बाँचब तेँ जग नाम ॥२४॥
एक कहाँ घरि बाँचिकहु, पहुँचत गए निजधाम ।

१—आहुत (बजाओल) भेला पर वीर बिलम्ब नहि करैत छथि ।

२—आमि फद्ध भेला पर दस गुना शरार घब लेछ ।

३—लपकालक अग्नि । ४—मत्ता हाथी । ५—ह्रास । ६—एकन कलेको
विषमय सर्व । ७—नरक के देखि डरे । ८—तयवारिरूपी विधूतराक्षि चमकि
के । ९—असुरममक अंजि मुवाए गेल ।

तेहूँ मनोरथ जानि मन, आव उचित संग्राम ॥२३॥
बहुत मधेवन कए अमुर, लाछल सभ मिल मुदध ।
अति हरवित भए सुरगति, समर कएल अनिरुद्ध ॥२४॥

अथ दण्डकच्छन्दः—

तखन यमुनि एहन भए मेल कलित—कोप कराल ।
अमुर-जाल पतन-सम भए खसए दीप विशाल ॥
वरि खर तरवारि कर वरि रिपुक अरु समाहि ।
काटि छट छट रिपुक मस्तक बाहि कृष्ण पुकारि ॥
जतेक छल रिपु खेत जूझल बाधि मेल गोठ चारि ।
तखन जाए पुकार कएलक अपन सबहिक हारि ॥
“कहुँ की हम बाण भूपति पुरुष रणविज आज ।
परम सुन्दर जितपुरन्दर वीर कर अस्त्र छाज ॥
क्षणहि रण विज अमुर जूझल ताहि भेल न देरि ।
पुरुष एक अनेक जनि भए कएल अमुरक देरि” ॥
दूत-बाधिका सुनि भूपति, क्रोध-कलुषित भेल ।
अपन साज समाज साजित रङ्ग-भूमि^१ चल गेल ॥
आए नारद गगनप्रगति देखए क्यो नहि आन ।
मदनमुख एक ऋषि देखि करि आशिषदान ॥
बाणभूपति सङ्ग बहुबल रङ्ग जूझल देखि ।
“जानमान विमानसौ नृप कहल वृत्त विशेषि ॥
बिबुध दानव दैत्य मानव कोन वंशक थीक ।
रत्नपाणि विचारि देखिअ भय-रक्षण नीक ॥२५॥

अथ छन्दोऽन्तरेण बाणोक गीतम्—

चौदिस रक्षक मानव भक्षक कोटि कोटि रणवीर ।
बाण हुकुम बिनु बहुनि न कहलन जे धुनु मलय समौर ॥

१—हरद्वार के जितनिहार । २—तरवारि । ३—युद्ध भूमि । ४—जानी कामी-
धक्षक कायरस्य, धीमान् (धीमधिव) देवानजी ।

“परिखा तेहन जलधि-सम चौदिस चौदिस वरए हुताश^१ ।
आबि सबए नहि सकल सुरासुर सब जन मानसि वास ।
तए आब तनया दूषित कए पहुँचल सङ्गर-बीष ।
कक्षेक असुरब्रह्म कए साहसमय ठाढ़ रुधिरमय कीच ॥
बाह्य एहन नृपति-दल अतिबल देखि असह अपराध ।
तखन एहन दुर्जन नहि राखिअ दिन दिन दोष अमाध ॥
तखन फेरि रण मेल बहुत विघ्न नहि थाकथि यदुवीर ।
बाण असुर मन भेल बेआकुल नहि रह मानस छीर ॥

देखि विमान कहल “सुनिअ नृप कह माया-संग्राम ।
तखन पराजित होएत वीर पुनु पूरत मानस-काम” ॥
कहल विमान सुनल बाणासुर अस्तरहित^२ भए गेल ।
नामकास लए यदुपति घामवल तखन अवश भए गेल ॥
हरवित भेल तखन बाणासुर गहल हाथ तरवारि ।
बधए बल्ल रतिपति-सुत^३ तहिखन हटल विमान विचारि ॥
“करिअ विचार थीक कोन वंशक निश्चय कए सभ वृद्धि ।
जेहन उचित नृप तेहन करब पुनु हमरा पड़इछ सूदि” ॥
समुचित कथा नृपक मन आएल दए रक्षक चौबीस ।
उपा चरित चकित-मन भाखथि व्याकुल मन अति रोष ॥
उपा सखाहलि तड़ित-रेह-ननु^४ धुक धुक भीतर प्राण ।
निज-पति-गति देखि परम बेआकुल हरि बिनु के कर प्राण ॥
एहन तरह देखि सकल नारद मानस कएल विचार ।
जाए द्वारका कृष्ण बुझाओइ होएत तखन परकार ॥
नारद कहल तखन रतिसुतसो न करिअ मानस खेद ।
आए कृष्ण दुन फेरब तहिखन ताहि पड़त नहि भेद ॥२६॥

*

*

*

*

५—महलक चारु भरक विशाल खता । ६—आगि ।

१—अदृश्य । २—अतिरुद्ध । ३—बिजलीकाक रेखाक समान देहवाली ।

अथानिरुद्धापहरणं यदा जातं तदा द्वारकायां किमभवदित्याह तदर्थः
भाषागीतम् :-

तखन द्वाटका भए बेल सोर । रतिपतिसुतके हरलक चोर ॥
देवकि सकुमिनि रतिक बिलाप । सनि कहु ककर हृदय नहि काप ॥
के मोर हरलक चान चकोर । सोनि भूवन हरिस के जोर ॥
सभ कह सभ मिलि तेजब प्राण । पाओब रतिसुत तेहि पए नाण ॥
तखन कृष्ण मिलि सभ परिवार । एकत भए कहु कएल बिचार ॥
के जग करत हमर अति मन्द । ककर छोड़ाओल अछि नहि कन्द ॥
गुर सुरपति मर जत भव लोक । हमर दुःख ककरा नहि शोक ॥
सभ यादव मिलि कएल बिचार । के हरलक रतिपतिक कुमार ॥
जकरे तकर सभ कहलक नाम । कृष्ण नकारेल एकहि ठाम ॥
तखन कृष्ण निज कहल बिचार । सुनिअ सबहु हरणक उपचार ॥
क्यो कुलटा तिअ तकरे काज । भल मन एकहुक नहि जसु लाज ॥
हमर कहल राखब मन लाए । क्यो मुनि गण कहलक पए आए ॥
कोजि पठाविय जनु सभ दीश । पुरब मनोरथ शीजगदीश ॥
कृष्ण कथा सुनि यादववृन्द । साधल मोन भेल मतिमन्द ॥
कृष्ण सभाविच शोभवि तेहन । *वहुगण मध्य कलानिधि जेहन ॥
"कृष्णानन सबहिक दूग कोर । तेहन शोभ जनि चाम चकोर ॥

अथैतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णसभायां यादवमण्डलीमण्डितायां कलि-
विशारदो नारदो "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण हरे हरे" इति पौष्टश नामानि प्रजपन्नुपसमागमत् । ततः सर्वे
यादवा उत्थाय मुनिभूतं प्रणेमुः । ततः स सकृष्णानपि यादवानाशीभिर्भय-
ङ्ग्यं वरासन उपविशे । ततः "हेकृष्ण कुशल्यसीति ?" मुनिराह । "तवाग-
मादि"त्युत्तरम् । "हेकृष्ण सर्वे यादवा उत्कण्ठितचित्ता एव दृश्यन्ते । किमत्र
कारणमिति" हां मुनिर्बभाषे । तद्बोजं कृष्ण आह "मुने गताद्यान्निशि

* - तारगमक सीत चन्द्रमा । १ - कृष्णक मुख सभक औजिक कोर भे छल ।

अनिरुद्धापहरणमभूदिति केनापहृत इति वयं सर्वे न विद्याः । त्वं सर्वज्ञोसि,
कदाचित्तद्वृत्तो भवद्विदितमित्येवं मन्ये" । ततो मुनिरुद्वाहसं कृत्वा कृष्णमाह -
"हे जगन्निवास ! तवाप्यग्रे सर्वज्ञोऽहमिति त्वहि प्रतारयति । तथापि वृत्ता-
मिदमहं जानामि तद्वदामि ।" ततश्चंकराद्वाणामुरधरदानमवधीकृत्यानिरुद्ध-
नागपाशबन्धनपर्यन्तमशेषवृत्तामभाषत ।

अथ भाषागीतम् -

तखन कृष्णमन उपजल कोथ । प्रलयानलक करत के रोथ ॥
बेल हुकुम सङ्ग चल चतुरङ्ग । शोणितपुर गए लागत रङ्ग ॥
बाणासुरक करव मदभङ्ग । कही पुण्यसे कएलक जङ्ग ॥
होअओ तयारी न कर बिलम्ब । रतिसुतकी नहि क्यो अवलम्ब ॥
नागपाश बान्हल छथि बाल । मामक मामस* एक मराल ॥
होयल एहन मन एकसर जाए । बाणासुरभुज काठिअ धार ॥
कृष्णक समक समीहित* सुनि । नारद कहल तखन मन गुनि ।
सुनिअ कृष्ण हमर किछु कहल । तखन तयारी कहवा रहल ॥२०॥

अथ पशेनाह नारदः-

कृष्ण ! त्वं गच्छ गच्छ क्षणमपि न भवेद् भीतकीर्तिः । बिलम्बो
नप्तारं रक्ष रक्ष क्षणश्च बहुमलः । दक्षरक्षाचलोसि ।
अक्षारिच्छावरम् अहि विगुधरिपुं वीर बाणासुरो य-
स्तत्पुत्री पुण्यपात्री बिलपति यदहं तेनमन्त्रागतस्त्वाम् ॥२१॥

तदुत्तरं कृष्ण उवाच-

गच्छत्वमेव सेना सपरिकरतरा यादवास्ते सुसज्जा,
गत्वा पश्यन्तु सर्वे समरभुवि मुने मदभुजानां विलासः ।
अकेणानेन कुर्वे सकलभूजपरिच्छेदनं बाणनाम्नो
यो वा शक्या सहायस्तमपि कुतर्कलि कोपितं तोषयामि ॥२२॥

१ - पुत्र, कासी शब्द । २ - हमर मन लपी मानस सरीवरक हेतु हंस ।
३ - अभीष्ट ।

एतदुत्तरं नाददः पुनराह —

येनासाः सा न गम्या दिशि विदिशि बहिस्सर्वतो जातयेदः ।
तदपारे कोऽपि गन्ता भवति न सहसा या पुरी क्षोणितका ।
प्रथमं पूर्वजं स्वयमपि गरुडं तत्समाहृत्य नीत्वा ।
गन्तव्यं बाणमेहे कलिनवसंभुजः क्रोधमूर्त्त इति कीर्त्तते ॥२३॥

कृष्णमाह स्वयमपिः—

स्मृते स्वमेक्षोहि समागमस्तदा स्मृत्वा हरिन्नाम ननाम दण्डयत् ।
उवाच हेकृष्ण करोमि किं यथा तथा वदन्नामिह तत्करोमि ते ॥२४॥

ततः कृष्ण आह—

रुपातोऽस्मि हेमिष विचित्रतामिषः सुदर्शनस्वाद्य तथेह विक्रमात् ।
चलायु बाणासुरगर्वसंश्रयताविधानहेतो विनतासुताधुना ॥२५॥

ततः समेक्षाकृष्टागुडाशया उपेन्द्रबलदेवा जातयेदः समीपं जग्मुः । ततः
किञ्चान्नवक्षित्यन्तरिक्षतो नारद आह पश्येत्तः—

प्राकारं वीक्ष्य बाहुरतिविपुलतरं श्रासयन्तं ज्वलन्तं,
गोलोकाधोगतस्तं क्षुभित इह परं तत्कथं यामि चेतः ।
ख्यात्वा गत्वा च नीत्वा कलशमवगतिः पुष्करोधञ्च गाङ्गम्,
व्यादायास्यं कृतार्थो व्ययितुमिति तदाकायं कृत्वा रवीन्द्रः ॥२६॥

ततः कुलप्राकाराभिनव्यया वैतलेयारोहेणपराः कृष्णसंकर्षणकामदेवा असुर-
देवपुरीपरिसरवज्रजुः । तत्र बाणासुराक्षकाः कृष्णादीन् समीक्ष्य सक्रोधा
ववर्त्तितम् । "के भवन्तो गरुडाकृष्टा ? अयं मा गच्छत" इत्युक्त्वा बहवो
ब्रूता बाणसमीपमेव जग्मुः । "हे देवदेव भागवतामृतस्यार्थकारिण-
सहायतार्थमेव गरुडाकृष्टारुद्रयो जनाः समागतमित्युच्यते तद्विषये यथाज्ञा ते
तथा वयं कुर्मः" । "रे रक्षका मदं प्रा विना ममागताश्चेत्तस्मात्साध्यकर्मणिस्ते
हन्तव्या एव । कोऽपि विचार ?" इति प्रतिश्रुत्य रक्षकास्ते कृष्णादिभि-
र्योद्धुः सन्मन्त्राः समागताः । अत्र दोहाः—

हुकुमं पाए सभ बाएकहु, कए सेना चतुरंग ।
अस्त्र अस्त्र गहि लक्ष राहु आरम्भ कएलक जंग ॥२७॥
कृष्ण-सदशन-बहुन-बिच पडिगेल अमुर-पतंग ।
झलझर-हुल कृत-ताड़ना ककर अंग नहि भंग ॥२८॥
काम, समशर अंगनि जनि, खसए अमुर रण-बीष ।
विनतासुत तल दलित रिपु रक्त ऊठ सम नीच ॥२९॥
कि कहव तजगुन धीति हम कृष्ण-आदि जन चारि ।
"हेला हरपित समर विच लक्ष लक्ष रिपु मारि ॥३०॥
किछु बाँचल जे अमुर जन बाणासुर तट जाए ।
सुनि चारत सब बसित मन, देल हुकुम अकुलाए ॥३१॥
तखन तआही कएल रिपु, वैरोधनि रथ जाए ।
छावुथ सपरिवार मिलि, रण भुवि पहुँचल आए ॥३२॥
कहल कृष्णसँ कोय कए बाणासुर अतिधूर ।
भुज कहुति मम दूरि कए, करह मनोरथ पूर ॥३३॥
के नहि जानए हमर, तीनि भूवन परधान ।
तापर कम्प सहसता, के जग हमर समान ॥३४॥

इति बाणासुरगर्वगिरं निशम्य वासुदेव आह—

अपन प्रशंसा उचित नहि, गुण बुझि जान सराह ।
विचकार कह हमहि विधि, से जग सुख अवधाह ॥३५॥
पीन काय बल हेतु नहि सत्ता बलक निदान ।
बलिकृत बामन-याचना, समय धरित जग जान ॥३६॥
गिरि-सम तनु गज लक्षमह, ताविष सिंह समाए ।
एक सकल बलमलित कए, राजशिर-मुहुता छाए ॥३७॥

१—पुत्र । २—कृष्णक सुदर्शन-चक्रकी आगिक बीज मे असुररूपी कतिगा
पडि गेल । ३—कामदेवक कुलक बाण वज्र समान । ४—गरुडक नहुसँ
चीरल । ५—अवहेलनासँ उपेक्षा पूर्वक । ६—विरोधनक बीष बाणासुर
कोट देह ।

राम तनुक अति एक पुनु, जाए हतल दशकीश ।
 तोहर^१ पितामह हतल हम, नरहरितनु जगदीश ॥१८॥
 तोहर गव्व^२ हम खर्व कए, काटव दश-शत बाहु ।
 प्रगट होएत सभ लोक विष, जनि विधु ग्रसए राहु ॥१९॥
 पुढव कएल हम विधुध मिलि, देवासुर-संग्राम ।
 सकल असुर-जन मारि पुनु, पुरल इन्द्र मन-काम ॥२०॥
 तुअ भुज-कण्ठ^३ति शमन कए, तखन अजाओव नाम ।
 अब किअ करह बिलम्ब रण, बाणासुर निज धाम ॥२१॥

इति कृष्णोक्तमवगम्याऽ 'सुरारिरयमिति' मनसि बुद्ध्वा जनिजुषो जननमरणे
 नियते एव तर्हि विष्णुद्वारा शमनञ्चेद्वरमेव मय्ये । का चिन्ता मरणे रण
 इत्यप्याज्ञानकी शुक्तिरतौ रणात्पलायने निरयमेव ततो मुद्घान्तरमकरोत् ।

अथ छन्दोन्तरं भाषा :-

साजि गज रथ बाजि भूचर विविध आयुध सज्ज ।
 कहव की हम रज्ज रचना व्यूह कनिविध भञ्ज ॥
 असि कराल विषाल चमकए, शक्ति-पट्टि-जाल ।
 पाश मुद्गर भास चौदिश चापसर कए ब्याल ॥
 मुद्घ सभ दिश जए लाबल, कहव की तसु भेद ।
 बाण प्राणक शस ताकथि, करथि मन बहु खेद ॥
 कृष्ण-कर वर चक्र चमकए, देखि नहि सक लोक ।
 अन्ध वन्ध कवन्ध ऊठल, भेल रिपु दल शोक ॥
 तेजि प्राण कुपाण अध-भज, गहल बहुविध चाप ।
 बरिस धर जनि मारि बारिद, कए गर्ज-कलाव ॥
 आण धरि नहि हमर सज्जर, भेल दोसर ठाढ़ ।
 आज बादव तोहि पराभव, होएत मोहि सह गाढ़ ॥

१—बुद्ध प्रथितामह हिरण्यकशिपु । बाणक निशा बलि, तनिक
 विरोधन, तनिक प्रह्लाद ओ तनिक हिरण्यकशिपु ।

सूनि यदुमणि कुपित-मानस, रचल आयुध ढेर ।
 सुख बलिभूत खूध भए गेल, विकल मानस बेर ॥
 मानि हारि विचारि बलिभूत, गेल शंकर पास ।
 कहल निज दुख बाहि कर-पुट, पुरिअ भगतक आस ॥
 तखन हसिकहु कहल शंकर, "बाहु-कण्ठ^३ति तोहि ।
 छुटल, निज घर जाए बैसहु, कहहु की फेदि मोहि" ॥
 "देव तुअ प्रथ वरण सेबल, छमिअ सत-अपराध ।
 करिअ जाए महापता मम, हरिअ दुःख अगाध" ॥
 भगतवश शिव भाजि^४ पहुँचल, प्रमथ-गण सङ्ग लाए ।
 कृष्ण देखि विशेष हरपित, शम्भु बाण-सहाय ॥२१॥

कृष्ण आह शिवं प्रति :-

बाण सुर-अरि विदित शंकर तकर कारण आज ।
 तखन मोहि तोहि मुद्घ संभव, तकर होइछ लाज ॥

उत्तरं शिव आह :-

भक्त-वश हम अगत गानए, सुनिअ मादध-राज ।
 कहल से फेरि जखन फेरव, तखन को जिव काज ॥
 तखन बलिभूत सबल भएकहु, फेरि लाबल जंग ।
 तखन सभ मन भेल सचकित, किदहु भावि-तरंग ॥
 समर-निर्दय सबय हरि भए, चक्र कएल कराल ।
 असुर-बल-विध जाए फेरल, समित-सुर-रिपु-जाल ॥
 तखन हलधर मदन खगपति, कएल कोप-विकास ।
 कतेक बाणक फौजि जूझल, कुञ्ज-पुञ्ज हुताश ॥
 देखि हारि विचारि मिरजल, शम्भु उवर विकराल ।
 जाए हलधर-तनु समाएल, उठए हिअ अतिज्वाल ।
 तखन हरिसँ कहल हलधर, उठए तनु अति भाह ।
 करव की हम अवश भेलहु^५ जहन नाम गराह ॥

१—मुद्घ-भूमि मे ।

हरि तनु जर आए पहुँचल ससए कएलक कोप ।
 तखन हरि-मन एहन भए गेल, करिअ हर-जर लोप ॥
 तकर कारण हरि विचारल, करिअ किअ परकार ।
 हमहु सिरजिअ तेहन जर भर, असह अति विकरार ॥
 तखन सिरजल सीरि^१ निज जर, हस्त अन्त हुनाश ।
 अपन सबहुक जर निकालल, शैव जर हुत-आश ॥
 निकसि हर-जर धाए सचिनय, खलल हरि-पद आए ।
 करए लामल बहुत गोचर, नाथ लीअ बचाए ॥
 सदय भए हरि सुनि बिनती, गिरिश-जर-भर काटि ।
 तखन माधव भाग कए पुनु, देल जगभरि बाँटि ॥
 हरिक सिरजल जर पराभव सकस के जग आन ।
 सदय भए हरि मन विचारल देखि रूप भयान ॥
 सुनहु निज जर असह जग भरि, सहत के तुअ चाह ।
 हमर तनुवेष अन्त वृक्षिकहु तखन पर-तनु जाह ॥
 तखन जर हरि तनु समाएल, भेल दीतल लोक ।
 "सीरपाणि, रसीश, बिनतातनय" भेल अशोक ॥
 इ सभ भए गेल तखन शिव बल बाण लाधल जंग ।
 कसए धमि सक हरिक शरहति, समित जोग तरंग ॥३२॥

जखन बलिगत भेल निजिजत, गिरिश काँ भेल रोष ।
 कएल शंकर रण-तयारी, हरिक तहि किछु दोष ॥
 तखन हरि-हर जगत-दुख^२ र द्वन्द-युद्ध पसार ।
 बुझए नहि दिन राति सङ्गर, अस्वजाल अंधार ॥
 हरक शर भेल उरग विषधर, चलल माधव-तीर ।
 तखन हरि-शर गहड़ भए कहू हारल हर-शर-भीर ॥
 गिरिशगर भए गजक आकृति, चलल गिरिशर-पास ।
 तखन हरि-शर सिंह तनु भए, हारल शिव-शर-आस ॥

गिरिश-बाण विपीडिका भए, पड़त यदुमणि-अङ्ग ।
 हरिक बाण मयूर-तनु भए, कएल हर-शर भङ्ग ॥
 कहव कत हम शरक रचना, रचल सम्भु अमन्त ।
 भेल हर-शर सभ निरुत्तर वृक्षि शिव-शर अन्त ॥
 हर समोभय समर—निह्य, लेल आमुद्ध शूल ।
 कएल हरि कर चक्र-धारण दुहु जगतक मूल ॥
 उवाल-जाल कराल देखि सभ, आँखि लेलक भाँपि ।
 खसल रवि विधु तारकागण, घरणि छठलिह काँपि ॥
 सयहु देव विचार कए मन, कहल विधिसँ जाए ।
 "बाण कारण परम विग्रह" कस अनुग्रह^३ धाए ॥
 एकसँ भए तीन विग्रह^४, जानि काजक भेद ।
 एकर विस्मृति, तखन की जग ? देव राखिअ वेद^५ ॥
 अस्त्र युग नहि मोष^६ एकहुक, वृक्षि कज्जज^७ आए ।
 तखन कए विधि उचित गोचर, रहस बेसल आए ॥
 दिकहुँ एक अनेक विग्रह^८, तीन तरहक काज ।
 करिअ ध्यान विधान मानस, तखन उपगत लाज ॥
 हरिहरभूति सुनि शंकर तेजि, आमुद्ध—जाल ।
 कहव किछु हम सुनिअ माधव बाण जानब बाल ॥
 फेरि हरिरी कहल शंकर बाण दुइ भुज राखि ।
 हमर वरतहु असुर-रक्षण भेल देखव आँखि ॥
 जखन शंकर दूर उपगत कज्जभू^९ निज गेह ।
 शूल चक्र समेटि राखल हर्षलोक विवेह ॥३३॥
 तखन इति फेरि रङ्ग उपगत हुलसि बलिचुत देखि ।
 कएल युद्ध समुद्र क्षण क्षण सम्भु-दम्भ विवेधि ॥
 हरिक मन अति कीध उपजल सिरजि अस्त्रक जाल ।
 जाए छारल बलिक सूत-बल भेल बाण बेहाल ॥

१—युद्ध । २—कुप । ३—वेद । ४—व्यर्थ । ५—ब्रह्मा । ६—देह ।
 ७—ब्रह्मा ।

भेल अन्तरहीत^१ बलिमुत कएल माविक युद्ध ।
 ओसहु हरि-धर जाए छारल सकल तनु अवशुद्ध ॥
 तखन बलिमुत भेल व्याकुल कोपमय रण आए ।
 करए लागल रङ्ग कतिविध चित्त शम्भु सहाय ॥
 तखन हरि अति क्रोधमय भए चक घएलन्हि हाय ।
 देखि बलिमुत गेल हरतट कहल गिरिजा-नाथ ॥
 "होहि तेजि नहि वारण दोसर भेल अबसर^२ केरि ।
 करिअ भक्त-सहायता हर उचित ताहि न बेरि" ॥
 "सुनहु बलिमुत करब हुम नहि आव हरि सँ रङ्ग ।
 हमहि हरि तनु दूज जातहु काट के निज अङ्ग ? ॥
 हमर आव सहायता नहि जाहू निज बल पाए ।
 अपन दोष विचारि देखहु करब की हम जाए" ॥
 तखन बलिमुत लखि पहुँचल रङ्गभूमि समीप ।
 देखि हरि-दुखि तेहन भए गेल भासु तट जानि दोष ॥
 बाण-बाण बिचारि माधव चक दैलन्हि राखि ।
 गङ्गा-धुनि कए चक केलन्हि कोव-पूरित आखि ॥
 बाण दिसि हरि हेरि भाखल "वतए तुम बल गेल ।
 करिअ साफल निज मनोरथ तकद अवसर भेल" ॥
 सुनल बलिमुत हरिक भाखल तखन उपजल रोष ।
 केरि हरिसँ रङ्ग लागल अस्व नहि भरि पोष ॥
 द्वन्द सङ्गर होमए लागल चकित लखि सभ लोक ।
 कहए लागल किबहु भावी करए लागल शोक ॥
 तखन कर गहि चाप धर-भर कएल यदुमणि रङ्ग ।
 शरक तर बलि-वाल लौखनि देखि निज बल भङ्ग ॥
 तेहन बाणक तरह देखिकहु भेल वधमुख^३ कूदघ ।
 जाए आप सहाय बाणक करए लागल युद्ध ॥३॥

१—अवश्य । २—अवसर ।

३—कार्तिकेय ।

प्रथम अखितहि^४ रणक आरम्भ युद्ध वाहन दुन्द^५ ।
 तुण्ड-पक्ष नखायुधाकुल भेल शिखि अति मन्द ॥
 "तेहन देखि विशेषि हरसुत लेल आयुधपुञ्ज ।
 गहड़ ऊपर कतेक फेंकल करए चाहिषि लुञ्ज" ॥
 तेहन यदुति तरह देखल बहुत मन भेल कोप ।
 "तारकारि-मयूर आकुल भेल के कर गोप ॥
 जखन हर-सुत बड़ बेआकुल अपन देखल हारि ।
 शक्ति कर गहि गज्जो कएलन्हि अस्त्र देलन्हि डारि ॥
 तखन काल कराल-सम कर चक लेल मुरारि ।
 भेल सभ दिश परम क्षोभित सकल लोक विचारि ॥
 कहल यदुमणि "सुनहु वधमुख करहु निज परकार ।
 काटि नुअ कर शक्ति काटब तोहि चक क घार" ॥
 तेहन अवसर वृत्ति भगवति तेजि अम्बर^६ आए ।
 कृष्ण सम्मुख ठाढ़ि भेलिहु लाज देल बहाए ॥
 "कृष्ण कृष्ण दयामयाशय हमर राखिअ तोष ।
 करिअ बाल गोहारि माधव छामिअ जत सुत दोष" ॥
 तेहन तनु लखि भाँपि दूध हरि कएल मुत-जिव-दान ।
 बाण कारण बैर सिरजधि तेहन देखि गेआन ॥
 तखन निज सुत सङ्ग लए कहू देवि गेलिहु गेह ।
 बाण प्राण बचाए हरिसँ समर दुइ भूज देह ॥
 एहि उत्तर बाण-सेना रहल जे चतुरङ्ग ।
 घाय जाए मुरारि सभ मिलि कएल सबहिक भङ्ग ॥
 गहल नहि दल भेल अथवल पुख वर पछताव ।
 हरि सुदर्शन जखन फेरब करब की हम आव ॥

१—दुहक वाहन से युद्ध । २—गहड़क नहकपी अस्त्रक द्वारा व्याकुल मयूर ।

३—तेजव । ४—तारकारि (मुरक शत्रु मयूर विकल भेल ओकर रक्षा के करत ?

५—वन्द ।

जतेक नृप-मुख सबहु पूरित छरहु की मति भेल ।
जाए सम्भू रिझाए सब विधि तखन की घर लेल ॥
तकर अवसर आए पहुँचल करत के अब बाण ।
हरिक क्रोध निरोध के कर बड़ल संकट प्राण ॥
सकल मूनि दिमान कहलक "सुनिअ बलिस्तु देव ।
आब को पछताए अओसर बितल स नृप सेव" ॥
एहि उत्तर भानु-संत-दुति^१ हरि सुदर्शन लेल ।
बाण-भुज सभ क्षणहिं काटल बूझ भुज तजि देल ॥
"ज' क छल तोहि बाहु-कण्ठुति छुटल से सभ आज ।
भाबि से पुनू भेल चाहए तकर की मन लाज" ॥
एहि उत्तर बाणकी भेल परम ब्रह्मक ज्ञान ।
जोरि करपुट कहल हरिसँ कएल मानस ध्यान ॥३१॥

देवगिरा हरि स्तीति पद्यः :-

जय तारधराभारधारणीद्वारवारण ।
संसारसारकसार देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३५॥
वृष्णिगणवतसाज वसुधाहो दयानिधे ।
त्रिविधाकारकृत्कार्यवशादेव नमोऽस्तु ते ॥३६॥
प्रह्लादाह्लादलीलानन्मर्यामोहित विश्वकृत् ।
भक्तिमय्यद भूतेश देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३७॥
कर्ता हर्ता च पातापि विश्वस्य बहुकार्यकृत् ।
अज्ञानतमसेनस्त्री देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३८॥
अबोधमयधैर्येन वरदानविधायकम् ।
स्वमाया कारणस्तत्र देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३९॥
कुम्भकर्णः कुतलपो वरदाने विधेः पुरः ।
अबोधमयदेव बुद्ध्या देवदेव नमोऽस्तु ते ॥४०॥
ममैव दोषः सर्वोऽयं कृतो रङ्गस्थया समम् ।
मायावशस्त नो गण्यो देवदेव नमोऽस्तु ते ॥४१॥

कथं मनुवदतामपि कष्टतामपि माधव ! ।

को वेद चरितं कोऽपि देवदेव नमोऽस्तु ते ॥३४॥

अथैवं स्तुतवाह "हे कृष्ण धिक् ! जीवनामरणमेव वरं तथैव विधेयम् ।
नो वैश्रतादिशमन्येषा तथा नृक । कायस्था मम पूर्वं, कीदृश्यधुनेति विमृश्य
बहुवशाकोप एव मनसि । अतः परं किं राज्यादिकम् । भवत्प्रीतये सर्वं मया
नृप्यमदायि मत्पित्रा वामनाय यथादायि तथैव । किञ्च मद्-कुहलुभं वान्मया
पाणिपीडनमित्यपि महद्भाग्यम् । तत्कुलमजानता मया तेन युद्धमकारि
तत्फलमेवैतदभूत् । मम दोषमगणयन्तव्यस्यो कृपासिन्धो दयां कुर्वति
मामकी भूयसी प्रार्थनेति किं बहुना" ।

अथ बाणासुरस्तुत्यादि निगम्यावन्धुवन्धुः कृपासिन्धुः श्रीकृष्ण उत्तरमाह
प्रथमं पद्येन । यथा—

काले जायत एव जन्तुरखिलः कालोऽवति प्रायतः,
कालो नाशकरो हि कालवशातो दृष्टञ्च कालात्मकम् ।
कालः कीदृति काल एव वदति (?) जेयस्स सर्व्वभयः,
कोऽहं तत्पुरतोऽसुराधिप भवे कुस्मिता मामकी ॥३५॥

यथा—

इवो राज्यं रामश्चन्द्रस्य भविता सर्व्वसम्मत्तम् ।
त शतस्सीतया सार्धं कान्तारे तग्निदर्शनम् ॥३६॥
पण्डवानामहम्मिनं चित्रं भूरि पराभवः ।
द्रौपदी च सदोनमना तत्रैव मुनिदर्शनम् ॥३७॥
एवमादिदृशा परम काल एवात्र कारणम् ।
निमित्तमात्रमेवाऽहं तथापि निगदाम्यहम् ॥३८॥
भवितव्यं भवत्येव नाभव्यं भवति क्वचित् ।
नार्हसि एवं शोचयितुमनिवार्य्येऽसुराधिप ॥३९॥
यदि भक्तः पुरारेखं द्वापरोऽत्र न कोऽपि मे ।
आवयोर्न च भेदोऽस्ति किमावरणतो भवेत् ॥४०॥

१—सूर्यक सए गुना प्रकाशित सुदर्शनचक्र ।

विमुक्त्य मर्त्यं राज्यं चिच्छेत्त्वं शिवसन्निधौ ।
 सुखं नृत्यादिकरणे वाच्छेत्सिद्धिर्भविष्यति ॥४१॥
 अद्यापि राज्यं येनमह्यं गृह्णामि प्रीतये तव ।
 वदामि चाहं कर्मणित्यनु रामो यथा वदो ॥४२॥
 उपानिरुद्धयोः कृत्वा दृष्ट्वा जम्बूलमालिकाम् ।
 गच्छामि द्वारको वृत्तं विदितस्तेऽस्तु यत्स्वदम् ॥४३॥

इति श्रीरत्नपाणिशर्मविरचितायामुषाहरणताटिकायां युद्धपर्यन्तमाद्य-
 प्रकरणं समाप्तम् ।

★ ★

अथ बाणासुरः सप्ताङ्गं सकलराज्यं मित्रकलत्रविचित्रचित्रितसौध-
 सौख्यं पुरीञ्चत कृत्वा शिवाभितक गन्तुमुत्सुकोऽभवत् ।

अथ भूजशतव्याकुलमनाः सख्यविराग आशुतोषं हृतदोषं शंकरमभि-
 लक्ष्योक्तय बाणासुरो वदति । अथ दोहाः—

असक ध्वजा अति विकल मन, विकट सरूप निहारि ।
 अथ की जाएस सौध^१ विच, की हम देखव नारि ॥४४॥
 शिव - पद सेवल जन्म भरि, तस फल सभ सुख भेल ।
 बरक समय मन विधिक वधि, कीदहु मति भए गेल ॥४५॥
 जपन अवस्था देखि सभ, बाणासुर तजि देल ।
 क्षणभङ्ग गुर तनु देखि मत, हर - दर्शन - मति भेल ॥४६॥
 जग भरि अक्षरन - क्षरण शिव, फेरि जाएस सुत पास ।
 करब अराधन तखर हर, पुरव दासक भास ॥४७॥

अथः परं कैलाशे शिवसन्निधिदृष्ट्वा यथोत्तरूपं शिवं पश्यन् स्तौति
 पद्यः—

भूजङ्गवरमेखलं, रफटिकजालमुभ्रविषं
 सुचीनुहुतभुग्दक्षं जटिलमिन्दुचङ्गं भूषणम् ।

विशूलिनमजं विभूषणवक्त्रमुत्सासिनं
 दिगम्बरमहं भजे कमपि कामदं तत्पदम् ॥४८॥
 यदीयमुद्गच्छन्ना मदि हि जातु या जायतेऽ
 धनोऽपि धनदायते विश्विरीशकामायते ।
 अवागपि बुधायते विगतद्वकशासायतेऽ-

चलोऽपि लघूगायते तमिह विश्ववन्द्यं स्तुवे ॥४९॥

सूरी न भवतः परो जगति कोऽपि भूतेश भो
 निरङ्कुश दहानुमायिवय एव कृत्वादिभिः ।
 शदैव निजकर्मणो यदि हि भोक्ष्य एवं फलं
 किमत्र गरिमा तव प्रणतभक्त्यदोहं शिशुः ॥५०॥
 अचिन्ति मनसा सुरस्त्वदितरो न शक्तिर्मया
 कदापि शिशुनाधुना विपदि यामि यस्यान्तिकम् ।
 भवन्नतिपरम्य ये वमपि दोषदृष्टिः कदा
 किमस्य भविता विभो तदिति नैव जाने गतिः ॥५१॥
 सन्दश्य सुरभिन्नतः सपदि संपदः सन्तु वा
 नतादरगता अपि प्रमथनाय नेहेतराम् ।
 परन्तु भवन्नोऽतिशं कुशलवाम नाम स्तुतं
 प्रजगन्तु दिवसानि मे जपत एव सायुज्यदम् ॥५२॥
 विहाय निल काशं व्रजतु सत्पथं मे मनो
 ममोजनिकशालये विहातु मायुसम्बर्धने ।
 नमःश्रुयनिवारणे सकलकारणे कारणे
 भवत्पदपुगे सदा वसतु नाथ-नाथाभ्यहम् ॥५३॥
 यदोपचरणाभ्युक्तं मनसि चिन्त्य वेधा जगत्
 सजत्पवति कञ्जजो यजनयाचको माधवः ।
 कथं न भजसे मनो निखिलकामदं दुर्मते
 भवेयमहमप्यस्तद्विदमर्थवर्मादिशाक् ॥५४॥
 विधेहि विपदम्बुधौ क्षरणमुग्रमग्ने शिवा-
 वतन्त्यगतिके दया भवतदुष्टकर्मोद्भवे ।

भवन्तमनुचिन्त्य यज्जमति लब्धकामा न के
विविन्नचरितं जनाः स्वपदि भूरिमवालयः ॥११॥
हराशु हर ने व्यथा स्वकृतदोषजामद्भुता-
मजाजिनसदासन प्रमथनाय वेदस्तुते ।
विपन्निचयसागरे पतत इन्दुभाल प्रभो
कुहव कल्याणमे विलपतो निजो दुःक्रियाम् ॥१२॥

इति बाणासुरकृतं शिवस्त्वोचम् । अतः परं बाणासुरः पारिवारिक-
महेशवाण्या भाषया कल्याणकरं शहरं आरब्धति ।—

(महेशवाणी)

शिव मोर करिअ तगाने ।
अपह व्यथा हम सःए न पारिअ संकट पड़ल पराने ॥
नाचि काछि शिव तोहि रिझाओल आव होएत बरदाने ।
तखन भेलहुँ मायावश अभिमत याचल आतक आने ॥
तकर उचित फल आए तुलाएल जेहन कएल अभिमाने ॥
दश शन बाहु क्षणहिँ काटल गेल नहिँ दोषी खगयाने ।
सभ तेजि धाए आए तुअ परिसर धए मन आस बिधाने ।
देखिअ नाच हरवि हर हेरिअ हरिअ दोष - सुन्ताने ॥
देखि नाच हर सभ दुख फेरल कएल मणक परवाने ।
रत्नपाणि भन वरद एक शिव जगत-विदित-यक्ष-गाने ॥१३॥

अपरञ्च गीतम् । छांदोग्यतरम् :—

आज कारण विकल बलिमुत गेल संकर-सीर ।
ललहुँ के हम भेलहुँ की अब कहए नहिँ रह छीर ॥
तखन बलिमुत कएल गोचर जोड़ि कर-पुट माघ ।
विकल भए तुअ पास अएलहुँ सबय हेरिअ नाथ ॥
देखि गोचर तखन संकर देल अभिमत दान ।
छूटि सभ दुख भेल अति सुख रूप देव-समान ॥

तेजि राज समाज सुत वित भेल सम्भूक दास ।
देखि सुभ-मति-पमथ-गण बर सम्भू पूरल आस ॥
रत्नपाणि विचारि मन भन असत जग अभिमान ।
बाण भूपति तन्हिक दुर्गति एहन भेल निदान ॥१४॥

इति बाणासुर-वरदानम् ।

अथाऽऽ परं बाणासुरपराजयं समीक्षयान्तरिक्षादागत्य कलिविशारदो नारदो
जयाश्रीभरभिवृष्य वणिक्वाचतंसं कंसशंसकं सपरिवारं श्रीकृष्णं
प्रत्युज्जगाद पश्येन :—

कुण्ड स्व धन्य धन्यस्त्वमसि हि जगतां त्वरसमः कोऽपि नाम्यः
कर्त्ता हर्ता च भर्ता कलितबहुतनुः कार्यतो वीर्यवर्धनः ।
आशीर्वादो मदीयो नृसुपारिचयात्कर्म्य एषोऽपराधो
बाणस्वाज्जदददप्रयत्नभञ्जलयाद् गीतकीर्त्तौऽङ्गुतोऽसि ॥१५॥
एक एकाग्रयनशरस्थो वनतेजसहायवान् ।
किं पुनर्बालभट्टेण प्रदुग्धमेन विशेषता ॥१६॥
एष बाणासुरो गवर्त्री जीवन्मृत्युमवाप्तवान् ।
स्वसेवाया न मामन्ते विजितिरिति भूयसी ॥१७॥

अथातः परं कुण्ड उत्तरमाह :—

किमेवं कवसि देवर्षे विरञ्चिमुतसत्तम ।
कृपा या तावकी तस्या मामकी भूतिरुत्तमा ॥१८॥
कुम्भजातेन मुनिना सिन्धुः पीतस्तपस्विना ।
विष्णामित्रेण कोपेन सृष्टिरेव कृतापरा ॥१९॥

अथ भाषया कुण्ड आह गीतम् :—

देखव कखन मदन-मुत आखि ।
उड़ि नहिँ सकिअ बिना मुनि पाँखि ॥
बिनु दर्शन नहिँ मानस धीर ।
कतेक समारिअ लोचन नीर ॥

कोदण्डबाणभुजवण्ड, सुरमण्डन, विजयचरित्र, सम्भ्रमित्र मित्रवह्निविधु-
लोचन, दुःखमोचन, जितविरोचन, भक्तलोचन देवदेव, देवकीवसुदेवसुत,
भूदेव, दारिद्र्यविद्रावण शमितरावण, सगुणनिर्गुणरूपधारण, नाममाया-
वस्तुनिर्द्वन्द्वविश्वसंकाशमायान्धकारापहारक नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥
इत्यनिरुद्धकृत स्तोत्रनिशम्य नारदमुखाच्च श्रीकृष्णः :- किम्विधेयमधुना मुने ॥
मुनिराह—“देव सखीवृन्दवेष्टितानुपां समाह्वयानिरुद्धेन पाणिपीडनसंपादनं
विधेयम्” ॥ तथैवोपा समांगरय श्रीकृष्णं स्तौति भाषया :-

की हम कहव कतेक मोर जान । अबला अल्प वयस की जान ॥
युग युग योगि धरति कत ध्यान । दरशन सपथ करति अनुमान ॥
पुण्य पुराकृत उपगत भेल । परम पुरुष मोहि दरशन देल ॥
भेलहु कृतारथ सब विधि आज । जगत जनक तह किकरव लाज ॥
कि कहव महिमा अगम अपार । जनिऊ ज्योति थिक जगत पसार ॥
रत्नपाणि भव मन अपवारि । अनुखन सन मन भजिज मुरारि ॥४१॥

अधैतस्मिन्नेव समये बाणासुरान्तःपुरे चारुद्वारा “श्रीकृष्णेन बाणासुरस्य भुज-
द्वयोवसहस्रभजदण्डजण्डनं सकलक्षलशमनञ्चाकारि, तदुत्तरं राज्यादि सर्व-
मुत्सृज्य बाणासुरः प्राणमावाश्लेषः कृतदोष आशुतोषान्तिकमुद्यमाविति”
निघण्टुनिघातमिवाकलय्य पट्टमहिष्यादिकारसंघी, रिचय, कीदृशः स्थिता-
स्तदा कीदृशोऽभवन्निति तटस्थ आह पञ्चाभ्याम् । यथा :-

सकलागमघोरा बलितपटीरा अनुपमवीरा मणिवलयाः
निजवत्सलभदोषादपगतरोषा विगलितकोपादिकनिचयः ।
अवमतधवयाना निखिलनिघाता लसदभिमाना अपि सदाः
मुपमाकविगीता अभवन्भीता जनसानीता मत्तयिनयाः ॥४२॥
किञ्च,

अमुराधिपदारा विगलितहारा, विगलितविहारा, जातशुचः
सखलोदितताराः पतिशुखसारा, लोचनधारा, हीनरुचः ।

मुच्छोक्तहामा, देवहताशा, विपदुस्पाशा मुग्धहृद-
स्त्वक्तीकृतवासा, विमलविलासा, बलदुस्त्वासा, नीतिविदः ॥४३॥

ततो बाणस्य पट्टमहिष्यादिका अपि पुरजनामो स्थियोपसरणा वयमिति मत्वाऽ-
सारणशरण-कृष्णानुसरणमेव विधेयम् । ततस्ता अपि सर्व्वी अगर्वा एव
कृष्णान्तिकमागताः । समांगरय ताः श्रीकृष्णं प्रत्युचुः पथीः :-

कृष्ण कृष्ण सहाबाहो बाहि बाहि दयानिधे ।
अनाथनाथ नायसरवमनाथा वयमागताः ॥४४॥
किङ्कृत्य इति जानीहि पुनीहि कृपया विमो ।
खर्व्वीकृतारिगर्व्वोऽसि सर्व्वप्राण तमोस्तु ते ॥४५॥
उपायाऽदोषया सार्धं पाणिपीडन-मञ्जलम् ।
नपुनरिर्व्विधेहि सविधे विधेरत्र विधानतः ॥४६॥

किञ्च, गीतं भाषया ता वदन्ति :-

“जखन सुनल बाणासुरभुज-भव-जण्डन कएल मुरारि ।
तखन अम्भार लाग मोहि सब दिश पति विनु अगति विचारि ॥
तखन कएल तुअ तरव-विवेचन देखल जग हरि एक ।
मायावश गभ राग वेआपित कि कहव तकर विवेक ॥
बझादिक सुर सकल विकल मन तुअ मायावश लोक ।
अमहि कृष्ण वधावधि नत बुझ, तेहि पए छूटए सोक ॥
बनन मरण दुहु थीक नियत जग सुख दुख अनियत जानि ।
करिअ कृष्ण तुअ पद-युग-सेवन की विधि लीखअ चानि ॥
रत्नपाणि भन सुनिअ मुदित मन तेहि पुरए जग आश ।
हरि-पद-कमल विमलमति भाविअ तखन ककर जग नाश ॥४७॥

अतः परं बाणामात्यो बाणासुरमहिषीचरितं श्रीकृष्णं प्रति वदति स्म । भाषया
गीतम् ।—

बाणासुरक विविह महिषी^३ तिस्र असुरगण जनि पाए ।
 तखन सगत मन तुअ पद चिन्तन पुण्य पुराकृत पाए ॥
 राजपाट जत तंकर समीहा सब हिति तेजल आज ।
 भेलहि कृतारथ तुअ पद देखितहि कहलन्हि के थिक लाज ॥
 कतए भूमिअ हम देश दिगभर कतए द्वारका धाम ।
 तखन आवि हरि वरजन देलन्हि पुरित भेल मनकाम ॥
 अपन कर्म फल सब जग भोगए ताहि तरह नहि आन ।
 शोणितपुर गति पाए चरित गति धएलन्हि गए शिवध्यान ॥
 रत्नपाणि भन सनिअ सकल जन अनियत जीवन जानि ।
 "विघ्ननिवर्त बुझ ध । जन तेजिअ भाविअ शारङ्गपाणि" ॥४३॥

अथ प्रस्तावं लक्ष्मणा पुत्ररवि श्रीकण्ठं प्रार्थयति पद्यम्पाम् :-
 कृष्ण त्वं बाहि नाथ त्रिभवनविजयी दुष्टगर्वपहारी
 बाणस्य मातयावृद्धया न परिहर हरे त्वदगतं मे सयाकृत ।
 भार्यं बाणात्मजायाः कुजसुरस्य भवभक्षभायर्वा भवेद्या
 रुष्टस्तुष्टः कुतो वा भवसि रामनतिः को हि वक्तुं तदीशः ॥ ११ ॥
 कर्ता हर्ता च गोप्ता भवसि च जगतामेक एवेति सत्यम्
 प्रायः कार्यप्रभेदाज्जागति बहुमनुर्वह्युपोष्यभेदात् ।
 देवाः सेया भुदेवाः सृष्टिनिचयविदः के न कुर्वन्ति सर्वे
 तेषां भ्रान्ता भ्रुते पदकमलद्युतं नाथ त्रीमि प्रसीद ॥१२॥

अथातः परं कुण्ठेनोक्तम् :- है बाणासुरामातस्य त्वं ममातिभक्तोसि मया-
 बोधि" । ततः कृष्ण आह नारदः पतिः - "हे मुने अतः परं कन्यादानकर्ता
 को भविष्यतीति" निशम्य मुनिराह - "हे कृष्ण ! बाणासुरामातस्य एव तदङ्ग-
 स्वात्तत्त्वदृग्महिषीसंमतत्वाच्च" । "अत्र कः पुरोधाः" । उत्तरं, "विर-
 ङ्गिचरेण स्मरणीयः" । कृते स्मरणे समाजगाम सः । अत्र विवाहोद्योगे
 सति अस्तरोगणास्तमागत्य ननुपुः गन्धर्वाश्च जनुः । आदौ विघ्ननिवा-
 रकत्वादिनायकस्य मङ्गलश्लोकः । यथा-

३-पटवारी स्त्री । ४-मरण निवर्तक । ५-कृष्ण ।

"जय शुभनायक वरद विनायक सुरवर-नायक वेदनुते
 जय हृद-बालक नतजन-पालक मणिमय-माल-कलाधिपते ।
 जय भय-भञ्जन सरमुनि-रञ्जन रिपुधन-गञ्जन मञ्जुमते
 जय भव-कारक दनुज-विदारक निज-जन-तारक विद्वपते ॥१३॥

अथ दुर्गतिनाशकरवाद् दुर्गमिती भाषया :-

कह कह मङ्गल देखि भवानी । मुअ पर-परस मिरिअ^१ वरदानी ॥
 तोह धनि जननि एक सभ जाने । पुरत मनोरथ के पुनु आने ॥
 संकट विकट मेटए तुअ नामे । विबुध सेवि तोहि पुरित कामे ॥
 दशविध रूप सेहो परिनामे । दुर्गति-ताशनि दुर्गा नामे ॥
 तुअ महिमा जग के कह देवा । पुरित मनोरथ तुअ पदसेवा ॥
 रत्नपाणि भन मन अवधारी । दहिन रहिअ मिरि-राज-कुमारी ॥४४॥

अतः परं वराकरणसमये कलशमेकमक्षयाममक्षणमस्तुपुरितं पल्लवाच्छन्नमुखं
 काचित्स्त्री शिरसि तिष्ठाय गायत्रीभिर्ध्वंहुवन्ताभिरसह शकृन् कर्तुं
 वरपास्त्रमागच्छति स्म । वर उत्थाय सति सम्भवे तदुपटमये पुष्पफलादि-
 राज्ञ्यादि द्रव्यञ्च प्रक्षिपति स्म । अत्र वरचलनमारभ्य कन्यादानादि-
 पर्यन्तस्य शीतमेकं भाषया, तस्य "पङ्क्तिनी" ति नामावधेयम् ।-

कलश एक जल-पुरित रे, लए चलु धए आये ।
 गाइनि बहुत जलए सक रे, पट्टेचए वर पाये ॥
 वरक पाग लए शिरसी रे, दोपटा गड़ लाई ।
 चणए सयहु धुम धुम कए रे, गावए शुभदायी ॥
 श्रीविश मण्डप धूमिअ रे, वर आइ सुठामे ।
 पहिरधि मय पट वीजर रे, पुलकित मन कामे ॥
 कएल अदीङ्गर वीधि रे, मण्डप बिच जाई ।
 अरहित भए वर जाए रे, कन्यागृह घाई ॥
 कन्या सहित कलए वर रे, सुनइत शुभ गीते ।
 गम विन मङ्गलचार रे, कि कहव तमु चीते ॥

१-विवाहक आरम्भमे पणेशक वादना । २-महादेव ।

कम्पादान लेल घर रे, सुभ वेद विधाने ।
तखन होम विधि बोधित रे, अनतए परधाने ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि रे, आशिष शुभकारी ।
दुलहि दुलह भेल समुचित रे, जीवधु युग चारी ॥४४॥

अपरञ्च । पंडितनीति नामक ग्रंथम् :—

निरखि बर सभ गुणक आगर, पुरल सयहिक आस रे ।
जनिक रूप अनूप सब कह, चन्द्रमय जनु हार रे ॥
धर्म से विधि जनिक सिरजल, जवधि हचि परगाथ रे ।
हृदय मणिमय हार सोभित, कान कुण्डल भास रे ॥
वचन मधुमय सद्य मानस, तयन कञ्ज विकास रे ।
मदन तन अनुहार राजित, सील सिन्धु विलास रे ॥
कंसहंसन—बंस अवतार, सहन रूप तरास रे ।
सकल नीति विचार कोविद, लेल मुरतर बास रे ॥
जनिक दरशन सहन मन होअ, बितए युग सह बास रे ।
दुलहि समुचित जखन सब गुण दुलह मन तनु बास रे ॥
रत्नपाणि न प्रेम दिन दिन, बाढ़ हो न हरास रे ॥४५॥

अप जाते विवाहे श्रीकृष्णो नारदमाह :—“मुने अतः परं द्वारकागमनमुचित-
मिति मन्मानसे प्रतिभाति, परन्तु भवताम्येषा विचारः” । ततो मुनिराह
पद्येन :—

सिद्धो मनोरथो मेऽयं सिद्धस्तेऽखिलसाहसः ।
जनुर्धनिकर्म सम्पाद्य गन्तव्यं द्वारकां प्रति ॥४६॥
बाणस्य प्रभृतीनाञ्च गीतानि विविधानि च ।
श्रोतव्यानि महाबाहो सर्वमोदकराणि च ॥४७॥

इति नारदवचः श्रुत्वा कृष्णोऽप्याह तयास्तिवति । ततो बाणस्य महिषी महि-
र्षमुपागता । अधावसरवशात् बाणासुरमहिषी पुनः श्रीकृष्णं प्रार्थयति
पद्येन :—

का माता जनकः सुतादिरपि किं राज्यं धनं वा सुखम्
कस्यान्ते च सहायता मुररिपो कस्यापि नो जायते ।
मोक्षः करतव दर्शनादृत इह स्वल्पादकञ्जार्चनाना
ध्याने मूर्तिरियं यदा हि पुरतः संवेह मुक्तिरसती ॥४८॥
किञ्च,

दष्टे स्वचरणारविन्दयुगलं कुर्वन्ति भूयस्तपो
ब्रह्माणा मुनयोऽपि ये बहुयुगे पश्यन्ति तेषां क्वचित् ।
आम्बालोचनगोचरो मदुमणे तद्भ्रामधेयोदितं
विशस्ति कलये दृशामि चरणे पश्यामि तेषां श्मशानम् ॥४९॥

अथैवं बाणासुरमहिषीप्रार्थनाप्रतिशम्य दयासागरो यदुनागरो मुरारिराह—

एवं भक्तासि च मे देवि विभक्ता न मदाशमात् ।
भविष्यति मदीया तं नेत्रगा मूर्तिरन्तमे ॥५०॥
बाणासुरस्य भार्यया एवं यदि राज्याशिरव्यया ।
तदा वासस्य ते देवि समोहैव नियामिका ॥५१॥

अथेदन्तिशम्य निवृत्ततर्पतिहर्षाऽमयाक्षया बाणमहिषी श्रीवासुदेव आह
गीतेन आपया :—

भेलहु कृतारथ तुअ पद देखि । तत्त्व विवेचन भेल विवेचि ॥
गोचर हमर सुनिअ अजरज । एहन विचार होइछ मन आज ॥
तुअ पद-युगल-कमल बिच बास । करए हृदय तेहि पूरए आश ॥
आय न नाव असुरजन-धाम । तुअ पुर जाए पुरत सभ काम ॥
रत्नपाणि मन मनक विचार । हरि दरशन केरि कतए विकार ॥५२॥

इति गङ्गोत्रीय-धोरत्नपाणिशर्मविरचिते जयाहरणनाटिकायां बाण-
महिषीविरचनपर्यन्तं द्वितीयं प्रकरणम् ।

अथ मूर्च्छनाप्रामादिवचनमस्वरयति गीतेनृत्वं विविधं त्रीर्धर्महोऽसर्वं दिनसु-
ष्टयमतीत्यानिष्टवतुर्धर्मिणि संगमे श्रीकृष्णो नारदं प्रत्युज्जगाद
“मुनेऽश गणकपरिपोषिते समये द्वारकां प्रति मङ्गलमात्रा विधेया, यथाज्ञा-
मवतो भवेदिति” । उत्तरमाह किञ्चिद्विहस्य नारदा—“हे कृष्णवशाव-
तस श्रीकृष्ण किमत्र गणकपरिपोषणम्, तवाज्ञं सकलमङ्गलकारिणी ।
भवतु नामोद्योगः सम्प्रति साम्प्रतम् तत्” । इति निशम्य तत्रत्याः सर्व-
एव जनाः कृष्णवेशपता मोदमानाः परस्परमुद्योगञ्चक्रुः । पद्येन आह
तटस्थः—

किंविकाच समायाता नामाकारा मनोहराः ।
अन्वाम्यपि च यानानि विविधानि समाययुः ॥७०॥
मत्तमातङ्गयुथा हि पर्वता इव पर्वताः ।
कम्पयन्तो घराधारं गज्वन्त इव वारिदाः ॥७१॥
अश्वा भृत्यादिर्वालिता नानादेश—सम्पूजवाः ।
धारागतिविदस्सर्वे समने नु मनोजवाः ॥७२॥
अश्वशस्त्रपरास्सर्वे पटवो हि भटादयः ।
अधुरा ममुत्तारारः कृष्णोऽद्विक्रमलानुगाः ॥७३॥
पश्यन्तो द्वारकां सर्वे कदा हस्यामहे वयम् ।
वन्धोषा बाणपुत्रीयं यत्प्रसादेन सत्पदम् ॥७४॥
कृष्णानुसरण्योऽभूम्भोक्षोऽनिरुद्धावते यतः ।
येषां कृष्णे वैरिभावः किमभाभ्यमतः परम् ॥७५॥
यानारोहणस्याथ समये समुपागता ।
अप्सराश्चित्रलेखा या कृष्णं स्तोति नृणां गिरा ॥७६॥

अथ गीतं भाषया :—

“अपराध सारण कृष्ण तुअ चरण । से बुझि हमहु छएल अनुसरण ॥
ब्रह्मादिक सेवधि निश दीन । अनितर भक्ति सपन जसु छीन ॥

सुनिअ निवेदन मन दए नाथ । कहूँ उचित सभ करव न लाय ॥
ऊपा सखी हमर अति प्राण । सपन विकल कहूँ कोन गति प्राण ॥
तखन गेलहुँ हम तिन्धुक तीर । देखि नारद मानस भेल धीर ॥
तामसि-विद्या देल मुनि मोहि । तखन हरल तुअ नप्ता जोहि ॥
एह एक सङ्गर कारण भेल । बाण द्विभूज भए शिव-तट गेल ॥
तकरो हेतु उपा प्रदान । तसु फल भए गेल एतेक निदान ॥
देवक धरित जगत के जान । एक तुअ विदित थिकहुँ भगवान ॥
दीनबन्धु न करिअ मन रोष । अहिँ क कएल सभ की मोर दीष ॥
कल्याणदण्डालय तुअ नाम । के जग आन पुरत मन—काम ॥
जाएब हमहुँ दोआरका देश । तकर कृपा कए करिअ निदेश ॥
रत्नपाणि भन मन मुनि आज । पुरव मनोरथ श्रीब्रजराज ॥७६॥

अथैतदुत्तरं कृष्ण आह । अथ दोहा :—

जकर जहन कृत तहन से, जग पावए फल लोक ।
ताहि हमर की सकय घनि, कि करहु मानस शोक ॥७७॥
करहु विमल मन अप्सरा, तखन चलहु मोहि सङ्ग ।
जे भेल से भेल समय-वश, की अब तसु अनुवङ्ग ॥७८॥
युग युग जे सुर असुर जन, कएलहि मोहि तह गर्व ।
तकर ककर नहि कएल हम, कए तनु धए बल खर्व ॥७९॥
बाणासुर हर वरद लहि, हुनि बान्हल अनिरुद्ध ।
तकर कोय हम प्रकट कए, कएल हुनक सभ खुद ॥८०॥
बलओ रहओ सभ अपन कधि, मोहि कहि शत्रूक भाव ।
देल राज्य हम सुमत भए, देखि दिमान स्वभाव ॥८१॥
रतिपति-संत-तिअ हुकुम लहि, चलहु उचित सम्मान ।
कएल जमा तुअ दोष सभ, जेतस न कह मलान ॥८२॥

इति कृष्णोक्तं निशम्य श्रीकृष्णं प्रणम्य समोदा श्रीमदुषान्तिकं जगाम ।
अर्पितसमय एव कुम्भाभङ्गदुहिता सखकामा राधा श्रीमदुपासहचरी समाश्रय
श्रीकृष्णं स्तोति गीतेन भाषया :—

कि कह्य हम कृष्णक परभेद । के सुभ आन वेद नहि वेद ॥
 पहिलहि धएल भीन-अवतार । तखन कएल वेदक ॥ ४४ ॥
 कच्छप-तनु हरि अहिखन भेल । पीठ उपर धरणी धए देल ॥
 सुकर-रूप जखन हरि भेल । धरणी रद पर तिल सम लेल ॥
 तरहरि-तनु भए देव मुरारि । हिरण्य-शिपु तनु देल बिदारि ॥
 वामन रूप धएल हरि जखन । बलिहि पठाओल फणिगृह तखन ॥
 परशुराम-तनु हरि धए लेल । नि-अघी पृथिवी कए देल ॥
 दशरथ-सत सीतापांत राम । दशमुख-निघन विदित भेल राम ॥
 जखन कृष्ण ब्रह्मरूपक रूप । यमुनाकर्षण कएल अनूप ॥
 जखन बएल हरि बुद्ध शरीर । दयासाशय अनुदित गीर ॥
 जखन भेल हरि कदिकक देह । नहि राखल जग मलेच्छच्छक रेह ॥
 दशविध तनु कएलन्हि कत काज । तखन भेल छवि श्री राजराज ॥
 शिशुक अवस्था कत हम कहव । देव अरित सभ सनिहहि हरि ॥
 कि कहव महिमा अगम अपार । कृष्ण-रूप ब्रह्मक अवतार ॥
 कहनाकर कथना किछु करिअ । अवला बूझि तब सन हरिअ ॥
 सतत रहए मोहि तुअ पद ध्यान । से बर दोअ सदाय भगवान ॥ ४५ ॥

इति रामाय गीतस्तुतिस्त्रिशय श्रीकृष्ण उत्तर जगद । तत्र दोहा :-

रामा तुअ मन भक्ति लखि, भेल मोहि परितोष ।
 तुअ वाचित बर देल हम कएल क्षमा सभ दोष ॥ ४६ ॥
 शबरी जातिक नीच अति, की तनु मदतज्ञान ।
 भेलि परमपद भक्ति तह, मोहि नहि जाति विगान ॥ ४७ ॥
 असुरवंश जनि पाए कहू, भक्त विभीषण भेल ।
 लङ्कापति चिरजीवित, मृत जनक सुख देल ॥ ४८ ॥
 अमिष भाव मोहि जे भणत हमहु भाजिअ पुनु ताहि ।
 हमर सुदर्शन भक्त-जन, रक्षा करए सराहि ॥ ४९ ॥
 समता वंश भेल जगत भरि, के कर भक्तिक योग ।
 करए चेत नहि जाए कहू, ककर करब गए भीम ॥ ५० ॥

अथ श्रीकृष्णोक्त-त्रिशय संसारं मुच्छीकृतवती तत्त्वज्ञानवती रामा द्वारकां
 विना नान्यत्र स्थास्यामीति मनसि निधाय सोपानिकमुपजगाम । ततो सार-
 वस्समागत्य आह "हे कृष्ण को वा विलम्ब मङ्गलवाशासमयोऽयमतोव
 सुन्दरः ।" कृष्णोऽप्याह "मुने भावयुक्तं युक्तं प्रतिपाति तद्वि वाक्पुत्री दीध-
 युतिनी मा भावतु । परन्तु विघ्ननिवारकत्वात् गर्णेशरतवपाठं दूर्भतिनाश-
 कत्वाद् दुर्गास्तवच्च पठित्वा शिविकामादह्याग्रे व्रजतु । तदनुगास्तन्मात्राद-
 यस्तस्मिन्वचमर्थद्वयं गच्छन्तु ।" ततो गत्वा मुनिस्थां प्रति जगादेदं वृत्तं,
 श्रुत्वेदं वृत्तं सा श्रीगणेशरतवस्वरूपगीतपाठारम्भमुच्चकार । पाठो यथा :-

जय करि-वदन मदन-रिपु-बालक नत-पालक सुरबन्धो
 रवि-शशि-वहन-नयन शशि-शेखर सन्तत-कथना-सिन्धो ।
 मणिमण-जटित-मुकुट-कुण्डल-पुग-मण्डितमेकरदन्तम्
 अङ्कुश कल्पलता-रद-पाशधरं प्रणमामि हसन्तम् ॥ ५१ ॥
 बीजपूर-पूरित-तुण्डस्थल गुण्डा-दण्ड-जितारे
 अरुण-तारुण-सिन्दुर-विभूषित यज्ञ-गुणोदित-हारे ।
 जय मूष-वधज विदित-चतुर्भुज हा-वलित-मतिहीनम्
 मामनुगतमव भावभायहारक शंकर तारक दीप्तम् ॥ ५२ ॥
 मुनिमुखाभुविताजमनोहर लम्बोदर वर-गीते
 निगमनिकरपञ्जरशुकमोदक बलितिरताशयनीते ।
 चिह्न-तमस-तरण मुनि-मानस-मानस-सरो-मराले
 मम मतिरस्तु परं महति त्वयि सन्ततमयि पुगपाले ॥ ५३ ॥
 सुरगण-मोलि-जात-किण-महामयि तव पदपङ्कजमीडे
 बाहि चपलमिह मामनुगतमभि काल-भुज-मुखनीडे ।
 रत्नपाणि-कलितं वसुपदमिह पठति समर्चनकाले
 स्तवमनुपाति स यो गणपति-पदमुग्रतभक्तिविशाले ॥ ५४ ॥

ततो दुर्गावचनं पठति स्म :-

शूलेन पाहि नो देवि गहि खड्गेन चाम्बिके ।
 घण्टास्वनेन नः पाहि ज्ञापयानिःस्वनेन च ॥ ५५ ॥

प्राच्यां रक्ष प्रतीक्याञ्च वणिङ्के रक्ष दक्षिणे ।
 आग्नेनात्मशूलस्य उत्त-स्यास्तथैश्वरि ॥८२॥
 सीम्यानि यानि क्वाणि श्रीलोभये विचरन्ति ते ।
 यानि चात्यर्थधोराणि ते रक्षास्मास्तैवा भुवम् ॥८३॥
 खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
 करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्व्वतः ॥८४॥

ततः पुरोहितादिभिर्दूर्वाक्षतं औ आह्वयति मन्त्रेणाह्वयि । गुरुषो-
 निद्रिज्जतिनो राजना श्रीमदुषा शिविकामारोह । मङ्गलध्वनौ प्रवर्त्तमाने
 गीतनृपादपुस्तके च वनिप्रभृतिकर्तृकस्तुतिपाठेषु ।

"शुक्लाम्बरधरं विष्णुं सशिवर्णञ्चतुर्भुजम् ।
 प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्व्वविघ्नोपशान्तये ॥
 लाभस्तेषां जयस्तेषां कृतस्तेषां पराभवः ।
 येषामिन्दीवरदयामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥"

इत्यादि शकुनमन्त्रादिकं पठन्तु ब्राह्मणेषु पुरतो विविधवाद्यकारावथो
 जम्बुस्तदनु श्रीवाणात्मजा चलिता । तत्पश्चाद् नतेमालङ्काः श्रीकृष्णवलभद्रप्रद-
 युम्बानिरुद्धाः प्रयाताः । ततो वाणासाह्यो लब्धराज्यः सपरिवारो जगाम ।
 ततस्तत्पुण्यां कुम्भप्रदित्वाद् भाषामीतेन तटस्थः—

बयो नहि रहल नगर भेल शून । सुमरि सुमरि सभ कृष्णक गून ॥
 सुत बित गृह कोन आओत काज । चलिअ द्वारका कि करब लाज ॥
 'योपित पुरुष केनो नहि रहल । कृष्ण - वियोग सभक मन हरल ॥
 देखव द्वारका कृष्णक घाम । जिवितहि पुरत स्वर्ग-सुख काम ॥
 पशु पाणी जत सभ चलि भेल । कृष्ण दयामय सङ्ग कए लेल ॥
 देखि बरिआत सरो भेल छबुष । सबहिक लोचन गोभा खुबुष ॥
 जतए समीहा^१ कृष्णक बित । तहिलन से सभ होइछ बत ।
 कृष्णागमन गहङ्ग लए चारि । एखन अलेख देखिअ अवधारि ॥
 रत्नपाणि भन न कर विचार । कृष्णक रचन सकल संसार ॥

इति गंगोली सं०— जीवैश्वरात्मज श्रीरत्नपाणिशर्म प्रणीतयामुपाहरण-
 नाटिकायां श्रीकृष्ण विहारकायवाक्यव्यस्तं तृतीयं प्रकरणम् ॥

(४)

कृष्णगमनावधि द्वारकायां सध्वं जनाः कीदृशा अभवन्तित्याह तटस्थो
 भाषामीतेन :—

रतिसुत हरण बेआकुल सभ जन, रोसर कृष्ण वियोग ।
 निशचिन नीन भवन नहि भावए, सभ कैल जत भोग ॥
 दैवकि आदि विकल मन सन्तत, जल विनु भीनक प्राण ।
 कोन दिन आनि देखथ गदुनन्दन, तहि विनु के कर प्राण ॥
 सोणितपूर दूर बट्ट योजन, बलिमुत ततए नरेश ।
 रतिसुत हेतु करब गए सङ्गर, के जन कहत उदेश ॥
 कृष्ण-पराजय कतहु न सुनल, मानस नहि रह थीर ।
 लाख समारिअ रहए न धैरज, सरथित^२ लोचन नीर ॥
 गणक थजाए सगुन जन ब्रूखिअ, आओव कखन मुरारि ।
 दिन विनु भानु द्वारका हरि विनु, देखिअ सबहु विचारि ॥
 रत्नपाणि भन सुनिअ सगुन जन, न करिअ मानस छेद ।
 पहुँचव आज कृष्ण सभ मिलिकहु, से जातव मन बेद ॥११॥

अतः परं कुनी इतीति यावत् सहायत्वात् सुरमिरा नीतेन । गीतं यथा :—

जय जयेश्वरिलासकारिणि प्रणतजनभयभारहारिणि,
 सजटपट्टकुरुवधारिणि पतिततारिणि हे ।
 तत्त्वदृष्टिनिवारसारा निजसमीहितकामचारा,
 कृतशमीकृतधरणिभाश जगदपारा हे ॥

विस्तरीकृतशैलवंशा मममत्तजितराजहंसा,
 वेदवृन्दकृतप्रशंसा समितकंसा हे ।
 निगुणामि गुणोपशालिनि समरजितरिपुमुण्डमालिनि
 सकलसुरमूर्तिमनुजपालिनि मोहजालिनि हे म
 त्रिभुवनवर्धनकृतनिवासा पुरिताजिलयादवासा,
 कामरूपकृतकपासा सर्वदासा हे ।
 स्वमति मातः सिद्धिदात्री भक्तकामदपरमपात्री,
 वरिमारणकालरात्री भवविधात्री हे ॥
 त्वमसि भवसकलाभिरामा त्वत्कृपाखिलसिद्धकामा,
 दोह वरमिह गिरिशवामा प्रकृतिरामा हे ।
 किञ्चिदन्वदिहेतिनेहे (?) सदा वस मिथिलेशगेहे,
 जननि निवृत्तिशुभाविदेहे दिव्यदेहे हे ॥२२॥

अथ दुर्गस्तुत्यनन्तरं कश्चित्कालमताप्य द्वारकानगरप्रान्ते सर्वसेना समागत्य
 स्थिता । इतः श्रीकृष्णो नारदं मुनिमाह :—“हे मुने ! किमतः परं विषयम्” ।
 मुनिराह :—“हे कृष्ण सर्वैरेव स्थेयम् । द्वारकायां सर्वैर्ध्यातुलः सन्ति स्व-
 द्वियोमादतः शोणितपुरोद्भव वत्तं सूक्ष्मरीत्या निगाश चारः कश्चिद्विचारद्व-
 येषणीतः । इतो भवद्वात्तां निशम्मानन्दकन्दायितकलेवराः सेनासामरा
 नामरा यादवास्तत्सर्वं समागमिष्यन्ति । यथयोगं सम्मिलनं विधाय नगरप्रवेश
 उचित इति मामको विचारः” । कृष्ण आह “मुने भवदुक्तं युक्तमेव प्रतिभाति” ।
 अथ द्वारकायां यादवात्मकला विकलाः कृष्णसन्दर्शनविरहाधिकक्षिप्ता गोप्योऽ-
 प्युत्कण्ठिताः । देवक्यादयस्तु प्राणानुत्सङ्गकामा एव । एतस्मिन्नेव समये
 श्रीकृष्णप्रेषितश्चार अजगाम । सन्दृष्ट्वा सर्वैर्जगद्गुः “कस्त्वमत्रागतोसि” ।
 स आह “द्वारकानगरमग्निघो सपरिहारः कुशलो लिङ्गति श्रीकृष्णरतत्वे रि-
 तोऽहमत्रागतोस्मि” । इति वातान्निधम्य हृषिस्त्वदस्त्वयः सर्वपादना
 अभवन् । पुनस्तोऽप्युच्यन्—“ओहूत ! बाणासुरपुरे किञ्च समभवदिति
 वद” । स आह—अथ दोहा :—

बाणासुर पुर जाए कहु, कृष्ण कएल बड़ मुड़ ।
 गेल द्विभुज भए राज दए, शिवतट मानस-खुड़ ॥२३॥
 लखि खसपति सभ जरगगण, कतए किबहु भए गेल ।
 हरषित रतिमुन आनि कहु, कृष्ण अङ्कु कए लेल ॥२४॥
 नारद मुनिक विचारतहु, रतिमुत कएल विवाह ।
 विधि विधिवोधित भेल सभ, ऊषा पथोलहि नाह ॥२५॥
 उचित धर्म हरि बूझि मन, राजा कएल विमान^१ ।
 पुरवासी सभ कृष्ण-मय, कि कहब सबहुक जान ॥२६॥
 अङ्ग चतुर्थी कर्म वश, बीति गेल दिन चारि ।
 देखिअ सभ मिलि जाए कहु, हरषित जेहून मुरारि ॥२७॥

अथ नीतं भाषया :—

“कणाकिणि मुनल सभ लोक । भेल कुतारथ बिसरल शोक ॥
 तखन तैजारी नगरक भेल । दोसर द्वारका जनि बनि गेल ॥
 चन्दन-चर्चित जगमग सरणि^२ । कुसुम-विभूषित भए गेल धरणि ॥
 ततए पताका सभ दिश सोभ । देखइत सुरपतिकी होअ लोभ ॥
 कि कहब नगरक तखनुक चरित । विशकर्मा जनि सिरजल त्वरित ॥
 सभ दिशि बाज सकल जन तखन । कृष्ण-वमल-मुख देखब कखन ॥
 गज-रथ-वाजि पदाति अलेख । हरम बेआपित चलल अघेष ॥
 कति विधि यात तैजारी भेल । देखकि आदि अपन कए लेल ॥
 चललि कुमारी सभ नहि लाज । कृष्णक शशुन करब गए आज ॥
 पूर्ण केलय पतनय मुख छाज । लए तिअ चललि तेजि गुहलाज ॥
 सन्ध्या समय चलल सभ साजि । जगमग चौदिश मणि-गण-राजि ॥
 तखन विविध तनु बजान-बाज । वन्दी सुयश गाव शुभ साज ॥
 चललि सकल जनि लय मुद बोध । जाए पड़ल सभ कृष्णक सोइ ॥

१—नगरद्वार पर ही कृष्णक पठाओल दूतक जति द्वारकानगरवासीक प्रति ।
 २—धीमान्, बाजक परासर्वदाता सचिव । ३—कायाकानी । ४—मार्ग ।
 ५—जति ? नती ।

मायाभोहतपाशिनो सुरनुता सन्नामिनो वैरिणाम्
तां त्वां देवि तमामि ताम विरसा पत्या महत्यावरात् ॥८५॥

अथान गीतं नृगिरा :-

तखन चूमाओन भेल सभवीधि । कि कह्य हरय मिलल नवनीधि ॥
दुलहि दुलह बिभुवन अभिराम । नगदड़ जाए कएल विश्राम ॥
गीत नाद बीतल दिन चारि । भेलि कृतारथ जत छल नारि ॥
भङ्गफोड़ी समुचित भए गेल । ओरभोर विधि गुरु - मत भेल ॥
ऊषा - चरित सकल जन देखि । के नहि आशिय देखि विशेषि ॥
सन्तति सम्प्रति सभयहु पूर । श्रीबुलकृष्ण जगत भरि सुर ॥
सकल मनोरथ पूरि गेल जखन । कृष्णक मानस भाए गेल तखन ॥
करिअ सभा सभ आओव देव । अविगण जनिक चरण सभ रोव ॥
तखन तँआरी सभ भाए गेल । घरनि मुधम्मि अनि बनि गेल ॥
रत्नपाणि मान अनुरम चरित । चाहिय कृष्ण होअ से स्वरित ॥८६॥

इति शुभम् ॥



रत्नपाणिहृत ।

६४

उचित विहित हरि सभसँ मिलल । बाणासुरक चरित सभ कहल ॥
देवकि प्रभृति उषा लग भेल । देखि तयु रूप कृतारथ भेलि ॥
उषा कएल भूमिलित प्रणाम । आशिय भेटल पुरओ मनकाम ॥
बाणासुरक देखल तिअ लोक । ककरह नहि राखओ पति-शोक ॥
कृष्णक चरण कएल घनि छरण । देखि द्वारका भए गेल तरण ॥
कुशलद्विज सभकाँ भए गेल । तखन मुगारि हुकुम एह देल ॥
श्रीवसुदेव चलिअ निज गेह । देखब कखन बहुत हिअ नेह ॥

तखनतरे छन्दोतरे भाषागीतमाह तटस्थः १—

तखन तारद कएल सम्मत । भेल लोक तँआर ।
आगु भाए मुनि चलथु सबद्विक, अधिक कृष्ण पिआर ॥
ताहि : तरे समुन जत छल, आगु से सभ भेल ।
तखन दुइ दल चलल हरपित, शेष-शिर^२ दाबि गेल ॥
घरनि उममग सिन्धु उछलित, भेल बोदिस सोर ।
वृष्णिवंश-समुद्र-चन्दिर^३, कृष्ण आगम जो^४ ॥
तखन सभ दल नगर पहु चल, सोव-सोमा देखि ।
बाणपुर जन सबहु मानल स्वर्गधाम विशेषि ॥
तखन सभ गेल कृष्ण-मन्दिर, जतए जगतक वास ।
एक^५ सौध निवास पओलक, भेल घूरित आस ॥
चन्द्र मन्दिर अति अनन्दित, सपति उषा जाए ।
ततए देखल देवि दुर्गा, यादवैकसहाय ॥
तखन देखि आधि कहलन्हि, करिअ देवि प्रणाम ।
रत्नपाणि समारि ऊषा, भेलि अवतति काम ॥८७॥

अथानिहउ सहिता बाणात्मजा यादवकुलदेवताछर-श्रीदुर्गा-प्रणामं करोतिस्म ।

दुर्गा दुर्गतिनाशिनी वसुधैवा या यदवोहलासिनी
पञ्चाहमेकविलासिनी सुभजटाजूटीचमोद्धासिनी ।

१—उवासीन, सामान्य नट । २—शेषनागक फणा ।

३—वृष्णिवंशकी समुद्रक चन्द्र । ४—महल ।

परिशिष्टम्

रत्नपाणिवृतम्

दशमहाविद्या-गीतम्^१

१.-श्रीकालिकायाः (इमन-कल्याण-राजे)

जय जयाचलराजकश्ये, चरणचिह्नक जय क्षरण्ये,
निगम-नुतिमतिजननि धन्ये सदयकश्ये हे ॥
समनर्धन रुचि-चिह्नुरजाले, सज्ज-सन्तत-रणकराले,
शिशुकलाकर वलित झाले, रूपशाले हे ॥
दहन रवि विश्व मयन शालिनि, सकल सुरमुनि मनुजपालिनि,
कर्ण शव युग भूतजालिनि, मुण्डमालिनि हे ॥
रघिद - पूरित विकट दशने, बैरमहिनि मगनवसने,
तवन - निःसृत लम्बिरसने, भीम हसने हे ॥
नव पराभव अगर हारिणि, नील तनु रुचि पुष्प चारिणि,
चण्डमुण्ड विनाश कारिणि, पतित तारिणि हे ।
असि शिरोभय वर किमिश्रे, विजित मल हविषुचि सहस्रे,
दलित-सुररिपुमदलमिश्रे, प्रणवमिश्रे हे ॥
फटि बिराजित शव कराली हर हृदिस्थित गतिमराली,
योधिनीगण वलितताली दक्षकाली हे ॥
वेदभुज शिव सुरतलोने, क्षाम तनु कुचयुगल पीने,
भिवमयीकृत विविध पीने, जगदधीने हे ॥

१-दश गीत गीत संस्कृत मे श्री जेय मैथिली मे अछि । एकर प्रकाशन १९१२ ई० मे बाबू ललितेश्वर सिंहक द्वारा सम्पादित 'मैथिलभक्ति प्रकाश' नामक मोल संग्रह मे रमेश्वर प्रेस, दरभंगासे भेल छल । (पृ० १ सँ १२ पृथ १६) ।

चित्तचसावनि विहितवासा, सरव-करव कुल विलासा,
निजहारासकदीकृतासा, पूरितासा हे ॥
पाहि शिवाशिव दुरित कोविधि, रुद्रसिंह नृपकपोविधि,
रत्न शिवासावनिगणि, शोरकोविधि हे ॥

२--श्रीतारायाः (इमनकल्याणराने)

जय जगत्त्रय गति विचित्रे, सधन घन रुचिगत विचित्रे,
सदयमानस भव विधात्री जीविचित्रे हे ॥
स्वर्गसि तारिणि परमस्वर्गा, रणक्षमीकृत शत्रु गव्वा,
लम्ब कुक्षि समक्ष सर्वार्थ, श्रुति निगव्वा हे ॥
द्रोविचर्म मनोज्ञ श्रीरा, वेदबाहु समस्तवीरा,
मुण्डमालिनि रक्तगभीरा, जनित नीरा हे ॥
पञ्चमुखा ललित भाला, पिङ्गलोत्र जटा विहाला,
बालरविहृत कृति कराला, क्षम्भु बाला हे ॥
सर्वविकृ चिति मध्यवासा, पद समुन्नत पद विलासा,
खड्गवन्धरा सुहासा, संजुलासा हे ॥
नामकर यितकञ्जमुण्डा, रत्न विनाशित जडमुण्डा,
सकल गोचर नित्यवण्डा, कोपवण्डा हे ॥
जगद्व्यापि जलोपधारा, स्वेतपंकजपद विहारा,
निखिल धूरधुनि मन्वंसारा, उन्नवारा हे ॥
रुद्रसिंहनृपानुरञ्जिनि, रत्नपाणि भवौष माञ्जनि,
विषय रत्नमाणि नेकरञ्जिनि, शत्रु मञ्जनि हे ॥

३--श्रीत्रिपुरमुन्दर्याः (इमनकल्याणराने)

त्रिपुरमुन्दरि चक्रवासा, -कलित्र बहुविधि भव विलासा,
क्षमस्वादि सृष्टीवदासा, क्षोभितासा हे ॥
विविध भावक रुचि मरीरा, सतत शोभित रक्तवीरा,
माल राजित विधु पटीरा, निखिलवीरा हे ॥

सततपूरित - सकलकामे, वेदभूजपरभाभिगामे,
स्वमसि नित्याकलयामे, क्षम्भुवामे हे ॥
प्राशशुणि धनुरिक्षु हस्ते, सहजराखित निमि समस्ते,
मुकृति निज चरणादि शस्ते, अति प्रशस्ते हे ॥
स्वमसि सा जगद्वेकमाला, स्वस्वपाजनिहृदिधाता,
हरिहरादि सुकीर्तिमाता, जननिपाता हे ॥
स्वमसि जगदाधार रूपा, निजकृपावश देव भूपा,
विविध लोचनमेकदूपा, मत्सरूपा हे ॥
अमृतबालविवाकराभा, गीतकीर्तिनिकायलाभा,
सकल जगदभियन्तनाभा, विधु नखाभा हे ॥
सम्पन्न मन्त्र विधानदीक्षा, स्वमसि सुन्दरि सत्परीक्षा,
वेदबृन्दपङ्कजशिक्षा, ब्रह्मपरीक्षा हे ॥
रुद्रसिंह नृपकरक्षिणि, निजवशीकृत सकल यक्षिणि,
रत्नपाणि सूर्तक पक्षिणि, शत्रुभक्षिणि हे ॥

४ - श्रीभुवनेश्वर्याः

बालदिनमणिरचिरदेहे, क्षणिकिरीटशुभप्रदे हे,
गुहकुचे कर्णकमेहे, जयविदेहे हे ॥
स्मेरमुखि भुवनेशि धन्ये स्वापिताखिल-नित्यजन्मे,
भक्तजनवरमुक्तिजन्ये शीलकन्ये हे ॥
अभय-शुणिवरपाशधारिणि, वेदबाहुविलासकारिणि,
भक्त-जनभयवृन्द हारिणि, धनुजदारिणि हे ॥
कमलपद गति विजित हृसे कीटवीतनु शमित कंसे,
सकलदेव गणावतंसे विदितवंसे हे ॥
हरिहरादिक विबुधसक्ते, शुभमयी कृत विविध भक्ते,
सदय मानस रुद्ररक्ते, भवविरक्ते हे ॥
भवनिकाया भवसि माया, जातु चित्तमिरीश जाया,
विविध विरचित शिवकाया, तदनुपाया हे ॥

धुरु कृपा मयि देवि दीने, शक्तिकादि विधान हीने,
जननि मयि करुणानदीने, तरुणि स्त्रीने हे ॥
स्वमसि महिमादिभिरपारा, कल्पपादपवद्विहारा,
जयमयी कृत भीति भारा, जगद्गुदारा हे ॥
रुद्रसिंह नर्पक पाजिनि, रत्नपाणि कृतावदालिनि,
भक्त मानस वास घालिनि, मञ्जुमालिनि हे ॥

१--श्री भैरव्याः

उदितभानु सहस्रविम्बा, रक्तपट्टपटी सुदम्बा,
भैरवी जयति प्रलम्बा, तदवलम्बा हे ॥
जपवटीमध्यस्थ विद्या-मपि वरं दधतीनवद्या
रक्तलिप्ता - पयोधराद्या विरदगद्या हे ॥
वेद कर वरलोकनेत्रे, रक्तपंकजहृदिविचित्रे,
शिरसि हिमरुचि मुकुट चित्रे, दुःकृतत्रे हे ॥
कुम्भ सुन्दर षडलक्ष्मी, मञ्जुहासा जगदन्ता,
प्रणत भक्तदशोल शास्ता, शम्भु कास्ता हे ॥
जटित गणि गण पीठ माले, ज्योतिरोष महाविशाले,
शत्रु कानन दाव जाले, रणकराले हे ॥
यज्ञ कर युग विबुध वनिता पठति नृत्यति हसति ललिता,
यत्पुरो विविधा सुकविता, भूतिविदिता हे ॥
प्रणतजन दुरितपहारिणि, नव्य भव्य भवेक कारिणि,
कमल कोमल चरण चारिणि, शिव विहारिणि हे,
रुद्रसिंह धरैकपाले, धुरु कृपा मयि शम्भुवाले,
रत्नपाणि सुतास्रवाले, रत्नमाले हे ॥

६--श्रीछिन्नमस्तायाः

नामिसितकंजमानुरेया, मोनिरतिपतिरतिविशेषा,
शक्त मानसरति विशेषा, सभागवेषा हे ॥

तत्र विलसितनेत्रहस्ते, सूर्यं कोटि शशि प्रशस्ते,
रणविनाशितरिपुसमस्ते, छिन्नमस्ते हे ॥
हृदि मुक्तोभितमृध्वहारा मङ्गसूत्र कृताहिसारा,
भूषणाङ्ग नरास्थिभारा विदितसारा हे ॥
मन्त्रकं परिधारयस्ती, स्वस्य धामकरे लसन्ती,
निजगलासृजमपि पिबन्ती, शत्रुहन्त्री हे ॥
डाकिनी बलितामिमाना, शणिनी च विराजमाना,
धामदक्षिणयोस्समाना, रक्तपाना हे ॥
सम्प्रसारितमञ्जुलास्या, लेलिहाना मञ्जुहास्या,
शंकरादिसुरैर्नमस्या, सत्प्रभास्या हे ॥
विविधपुष्पचयानुवङ्गा, सज्जितालकशोभिताङ्गा,
भूरिक्ति कृताचभङ्गा, विविध गङ्गा हे ॥
रुद्रसिंहनृपे सहाया भव सदा गिरि जैकजाया,
रत्नपाणिमुतापुराया, जननि माया हे ॥

७--श्रीधूमावस्थाः

जयति भगवति काकयाने, देवि धूमावति विधाने,
जयति रुक्मशनुप्रधाने, लम्बमाने हे ॥
मलिन चीर विशालवन्ता सूर्यकक्षचला दुरन्ता,
दुर्मता कलहैकशास्ता, धूलिकास्ता हे ॥
स्वमसिनगरोद्धे गदाध्री, कुष्णरुक्मिभेकपात्री,
चितामयभूवि वासधात्री, भवविधात्री हे ॥
रुक्मक्षत्रय भीति भावा, विविधरिपुवनवृद्धदाया,
गिरिशदक्षितचारुहावा, दुःखभावा हे ॥
सप्तशोभितमुक्तकेशा स्वेदपूरितहृत्पद्मेशा,
देवि विहरसि कामवेशा, मङ्गसुरेशा हे ॥
सदा निजवशधनदक्षिणा, क्षुधा व्याकुलित स्वचिन्ता,
यदपि सुरमुनि मन्त्र्यसत्ता त्वमसि तत्ता हे ॥

त्वत्प्रभावमयो महेशो नैव हरिरपि ब्रह्ममोक्षो,
जयति कोऽपि सुखमरेशो यः प्रजेशो हे ॥
कुश दयां मयि जननि दीने रत्नपाणि शिशावधीने,
मयिलेशदयावधीने, त्रिविधलीने हे ॥

८- श्री बगलायाः

अपि सुधोदधिभक्तिविकासा; लसति वेदीविधुविलासा
तत्र सिंहासनगतासा; मोहपाशा हे ॥
लसति बगले पीतवर्णे पीतभूषण—वलिक्कणे
कामसुन्दरतनुरर्णे, सर्ववर्णे हे ॥
वैरिणं परिपीडयन्ती मुद्गरम्परिधारयन्ती
स्वच्छदक्षकरे लसन्ती मोहयन्ती हे ॥
वामकरवृत्तवैरिसने सज्जराजित पीतवसने
घृतगदाक्षुण्णिशालदशने, मञ्जुहसने हे ॥
कृतदशाकृतिसिद्धिभेदा स्वमसि देवि सत्तापभेदा
स्मृतिपुराणसमानवेदा, शमितसेवा हे ॥
मदनमोहनरूपशाले जननि करुणाभवविशाले
'केश नव नव पाश आले, भव्यशाले हे ॥
भवसि मातः सिद्धिप्रिया, स्वत्प्रसादजगद्यवद्या,
सूकका अपि हृदयविद्या—स्तवनवद्या हे ॥
देहि देहि वरं शरण्ये, रुद्रमिह नृपेतिष्ठत्ये,
रत्नपाणिहृदेकगन्धे, भूपकन्धे हे ॥

९- श्रीमातङ्ग्याः

दयामघन तनु सिंह याने, सकल सुर मुनिकीर्तनाने,
भक्त सम्भव विभवदाने, भवनिधाने हे ॥

अष्टसिद्धि विराजमाने, सुरकुतार्चन मन्त्रिधाने,
भाल शगधर दीपमाने, निरुधमाने हे ॥
ज्येष्ठमङ्कुशमभि दधाने, रत्नसिंहासमशयानां,
वाद्यमसिमपि सङ्गिधाना गीतमाना हे ॥
रत्नभूषण चारुहासा, लोल लोचन विबुध दासा,
यावकोदित पद्मविकास, मुद्रकाशा हे ॥
नील नीरज वक्त्रभाषा, लसति वीणावद्विलासा,
देवि मातङ्गो ममामा, नृदिन वासा हे ॥
कटक वामित पर्णरक्ता जनशुक्लदक्षचिचिभक्ता,
सकलसुरभक्तिकानुरक्ता, भूरि भक्ता हे ॥
दनुजराक्षस—मांसादक्षा, रणकुशाखिल—देवरक्षा,
देववर्ण विभक्त पक्षा पीतवक्षा हे ॥
रुद्रमिह नृपे सहाया भव सदा जगदादिमाया,
जननि सुररिपु सामिकाया मदनपाया हे ॥

१०- श्री लक्ष्म्याः (इमन कन्याण रागे)

जगत् रूप रुचि प्रधाना, क्षीमक्षीर विराजमाना,
पद्म युगमभयस्वधाना, जयतिघाना हे ॥
इन्दिरा वरदासि धीरा, प्रणवरूपा मृष्ट नीरा,
स्वीयकरुणव्यास—कीरा सुरमभीरा हे ॥
विरवचारुहितम्बवेशा, पद्म धामिनि मञ्जुवेशा,
सुवत नीरद नीलकेक्षा नतसुरेशा हे ॥
सितगर्जरभिचिच्यमाना जलधटैरमृतरमाना
स्वर्णजेम्बुतिमोदमाना बहुलदाना हे ॥
सिन्धुजेति समस्तगीता स्वमसि धरणीजापि सेता,
कृतदशाकृतिरुन्नीता जगदघोता हे ॥
अष्टसिद्धितिधिप्रयाजी कामनाचयपूर्णपात्री
स्वीपनिष्मिन् सकलपात्री, भवविघ्नात्री हे ॥

सप्तवारिणि ललित बोपा, सदा निजवक्ष विनुषयोपा
 क्षमिन्बहुविध भक्त बोपा सतततोपा है ॥
 स्थिरा भव मिथिलेशगेहै किञ्चिदन्तदपीह नेहै,
 रत्नपाणिनिकरप्रदे है, शंभुदेहे हं ॥

११-श्रीकालीक

जय जगज्जननि ज्योति तुभ जगभरि, दक्षिण पदयुत नामे ।
 अति द्युति पीन पयोधर उन्नत सज्जल जलद अभिरामे ॥
 विकट दशन अति खदन भयानक, कृजल मंजुल केशा ।
 क्षोणितमय रसना अति लह लह, श्रीकर मस्तक देशा ॥
 तीन तयन अति भीम राय तुभ, शय दुइ कुंडल कामे ।
 शय कर काटि मथन पांती कथ, चौदिस कटि परिधाने ॥
 मण्डमाल उर चारि भुजा तुभ, खड्ग मुण्ड दुहु वामे ।
 दक्षिण कर वर अमय विराजित, गगन-वसन वसु यामे ॥
 शिव-शय रूप दश तुभ पद युग, सदा वाम शमशाने ।
 फेरव रव कर चौदिस शोभित, शोमिनिगण परिधाने ॥
 रत्नपाणि भन अपरुष तुभ गति, के ललि सक जगमाता ।
 मिथिला पतिक मनोरथ दायिनि सचकित हरिहरधाता ॥

टिप्पणी—श्रीकर=चन्द्र । भीमराव=भयानक शब्द । शय=मृतक । गगन-
 वसन=दिग्म्बर । वसुधामे=आठो पहर । फेरव रव=सिपारक
 शब्द ।

१२-ताराक

लक्ष्य उदर अति खर्ष भीम तनु, द्वीपि-अजित कटि देशा ।
 अस्थि चारि पद तां विष खण्डर, बाल भयानक केशा ॥
 एक चरण चढ़ अरु चरण लस, से सित पङ्कज वासी ।
 अति मृदु हास भास नव यौवन, ललि रुचि शुचि सम भासी ॥
 दक्षिण बाहु दुहु खड्ग कर्ण लस, रिपुशिर अतपल वामे ।
 कृपि अशोभ्य भाल पर शोभित, लह-लह रसन मुकामे ॥

प्रात समय रविबिम्ब विलोचन, दम्भुर दन्त विकासे ।
 उदित चिता चौदिस छह-धट कर, तउय देवि तुभ वासे ॥
 पिङ्गल जटा जूट शिर शोभित, वेदबाहु अति भीमा ।
 अनुपम चरित चकित मुर नर मनि, के कहि सक तुभ सीमा ॥
 रत्नपाणि भन तुभ पद सेवक, तारिणि मुनु अवधेय ।
 शोमिथिलेशक सतत करिअ सम्भ, ताहि न करिय विक्षेपे ॥

टिप्पणी—खर्ष भीम तनु=भट्टि वा यप्रोत एवं भयानक देह । द्वीपि अजित
 =बधम्बर । अस्थि=न-कंकाल । पद=ऊपर पीठ कए पाइल ।
 लस=शोभित, सित=उज्जर । शुचि=प्रच्छन्न प्रीति । वेद बाहु
 =चारि भुजा । भीमा=भयानक ॥

१३-त्रिपुरसुन्दरीक

जय तिसु भानु अयुत तेजोमयि त्रिपुरसुन्दरी देवी ।
 तीनि भयन घन्या तोहि सब कह, अकर पुरन्दर सेवी ॥
 कतिविधि अतिरत आरत मुति तनु, बाल कलाकर भाले ।
 भरण वसन विलसित तुभ भगवति, देवि विलोचन बाले ॥
 सम सरपास घनुष इच्छु-दण्डक मुनि शोभित कर चारी ।
 श्रीपुत लक्ष विराजित तुभ पद, कमल भक्त भाष हारी ॥
 आगम निगम विदित तुभ महिमा, के कहि सक अवधेयी ।
 तुभ मय जगत भगत भावकारिणि, की मत करत विक्षेयी ॥
 रत्नपाणि तुभ चरण सरोरुह, सभक करिय अशिलापे ।
 मिथिला पतिक सतत कथ मङ्गल, कि कह्य गोचर लाखे ॥

टिप्पणी—तिसु भानु=बालसूर्य । अयुत=दस करोड़ । पुरन्दर=इन्द्र ।
 अतिरत=सज्जित, रञ्जित । आरत=आरत । कलाकर=चन्द्र ।
 विलोचन बाले=शिवक प्रेयसी । सरपास=बाण श्री फाली । इच्छु-
 दण्डक=कुम्भारक छड़ । मुनि=अंकुश ।

१४--भुवनेश्वरीक

जय भुवनेति श्रीतिमप भञ्जनि भगवति भवित देहा ।
 इयाम जलद अभिराम चिकुर चय, लसत भाल शशि रेहा ॥
 उदय समय रवि विष्व अरुण छवि, नयन तीनि तुअ भासे ।
 सिरमय जडित किरीट विराजित, मूख सुपमा मृदु हासे ॥
 वाम उपर कर लसय अभयवर, नीच बीच कर धन्या ।
 दहिने वार कर अंकुश तमु अय, पास भास गिरि कर्या ॥
 भूपुर भवन वसिष्ठल जोड़स, ता बिच वसुदल कञ्जे ।
 ता बिच बीच उपर तुअ पद युग, कमल ध्यान भाय भञ्जे ॥
 तुअ तनु रचन वचन मोचर नहि, चकित शम्भु जगदीश ।
 भगत मनोरथवश तुअ तनु जानु, वचन वेश्यास ईशा ॥
 रत्नपाणि भन सूनिय समन भय, कृष्णा कर जगमाता ।
 पुरिय मनोरथ श्री मिथिलेशक, तुअ यश भाव निरमाता ॥

टिप्पणी—वाम उपर = वामा भागक उपरका हाथमे अभय ओ निचला हाथमे
 वरदान । तसु अय = दहिना भागक निचला हाथ मे । वसुदल—
 अष्टदल ।

१५.भैरवीक

अमुन उदित रवि रचिर देह छवि, अरुण पाट पट भासे ।
 रिपु शिर निकर माल उर शोभित, दश दिश ज्योति विकसे ॥
 रुधिर लेपमय पीन पयोधर, मूख अरविन्द समाने ।
 दशधर रत्नमुकुट शिर शोभित, मृदुल हास परधाने ॥
 पुस्तक, अम्बु, अक्ष जवमाला, वर कर चारि निधाने ।
 निजजन शंकरि, असुर भायंकरि, श्रीभीरवि तुअ ध्याने ॥
 विषय विषम रस हृदय देखिपद, भजत न धरत ने जाने ।
 भवन भवन तसु उदित सुकृति वसु, से जन भव पर ध्याने ॥

जगत जमनि धिनती कछु सुनिए, रत्नपाणि भन दासे ।
 श्री मिथिलेशक हृदय बास कर, पुरिय तासु सभ आसे ॥
 टिप्पणी—अमुन = वस हजार । निकर = समूह । दशधर = चम्पू । निजजन =
 अपन सेवकक लेल बाहुरी छवि ।

१६—छिन्नमस्ताक

जय जय ज्योति जगत गतिद इति, चिकुर चाह रुचि भाले ।
 परम असम्भव सम्भव तज वस, पीनपयोधर बाले ॥
 कमल कोण रतिमण्डल ता बिच विविध त्रिकोणक रेखा ।
 ता बिच रति विपरीत मनोभव, सुपमा सरित विशेषा ॥
 पद आरोपित पद लस ता पर, अरुण भानु शशि रेहा ।
 उरस विशाल माल रिपु-मुण्डक, फणि जपनीत सुरेहा ॥
 दक्षिण कर करवाल, वामकर, निज शिर अति विकराले ।
 लह लह रसन दशन कटकट कर, फूजल केश विशाले ॥
 निज गल गलित उपर कय रुधिरक, धार तीन बह धीरे ।
 दुद दुद योगिनि पिबत दुःख दिश, निज मुख एक सुधीरे ॥
 रत्नपाणि निज सेवक जानिए, मानिए देखि निहोरा ।
 मिथिलापतिक सतत कर मंगल, मन धर मोचर मोरा ॥
 टिप्पणी—मनोभव = कामदेव । पद आरोपित = ताहि त्रिकोण पर चरण
 शोभैछ । माल रिपुमुण्डक = विशाल छाती पर शत्रु मुण्डक माला ।
 फणि = सापक जनेऊ । करवाल = तराशि । निजगल = अपन
 गरदसि से बहराइत ॥

१७--धूमावतीक

जय धूमावति जगत विदित गति, इयाम रुच्छ तनु भासे ।
 फूजल चिकुर निकर अति लम्बित, तनु जनु छवि अकासे ॥
 कलह-प्रेम अनुखन तोहि भगवति, अम्बर मलिन सररीरे ॥
 दशन विकट अति विशद विरल गति, स्वेद बहय तनु धीरे ॥
 क्षुचित सतत मन रुच्छ त्रिलोचन, कुक्षि सूप सन तोही ।
 तरल सुभाव दुसह मन अनुखन जन उद्वेगन मोही ॥

वापस रथ नुअ देवि त्रिलोचन, वास रचय समसाने ।
कउखन सुन्दरि अनुगत रुचि धरि कउखन परम भयाने ॥
रत्नपाणि भन रहिय मुदित मन, निज सेवक मोहि जानी ।
सदा करिय मिथिलेशक मंगल, गोचर मुनिय भवानी ॥

टिप्पणी—चिकुर निकर=केशसमूह । स्वेद=चाम । वापस रथ=रथक
ऊपर मे कोआ ।

१--बगलामुखीक

जय बगलामुखि अमृत-सिन्धु बिच मणिमण्डप निधिदेवी ।
ता बिच रत्नविहासन ऊपर, तुअ पद लस भयभेदी ॥
पीतवसन तुअ पीत विभूषण पीत कुमुदमय माला ।
फजल चिकुर निकर वुर लोचन दुखमोचनि हरवाला ॥
वाम हाथ रिपुरसन रक्तमय, दहिन सदा अभिरामा ।
अनुगत जन जयकारिनि सुररिपु, मदिनि पूरत कामा ॥
कुण्डल-लसित गण्डमण्डल युग, चण्डभानु युग जोती ।
विपति विदारिनि रिपुमद हारिनि, दन्त विराजित मोती ॥
श्री मिथिलेशक कह जय देवी, पूरित कह सभ आसे ।
रत्नपाणि गोचर कह भगवति, कह मम हृदय निवासे ॥

टिप्पणी—रिपुरसन=शत्रुक जीह । चण्डभानुयुग=दू गोटे प्रचण्ड सूर्यक
समान ज्योति वाली ।

१६--मातंगीक

कीरक सम रुचि श्याम सुतनु लस, माणिक भूषित देहा ।
शिशु शशि माल, माल मुक्तामणि, हासमुखी शुभगेहा ॥
निज पद बिनत विभव वरदाइति, तीनि नयन नुअ भासे ।
सुर मुनि आदि सकल जनसेवित चरण विजित पडवासे ॥
कटुक सुवास पान आरत मुख, कर धर राजय बीना ।
अष्ट सिद्धि मयि सिद्धि स्वह्वा, मातंगी जसु नामे ॥

मिथिलापतिक पुरिय अभिलाषा, निज पदनत अवलम्बे ।

रत्नपाणि नुअ पदयुग सेवक, गोचर कह जगदम्बे ॥

टिप्पणी—कीर=सुभा । कटुक सुवास=लवंगक सुगन्धियुक्त पान एला
सँ लाल मुँह कएने ।

२०--महालक्ष्मीक

जय कमला कमलायत लोचनि, भव भयमोचनि कम्पा ।
घन रुचि कुच, चामीकर तनुरुचि, चारि भुजा अलि धम्पा ॥
चाह किरीट विराजित मस्तक, धारिनि पाटक चीरे ।
लसय वराभय कर दूई दुइ, पंच युगल तसु धीरे ॥
चारि कनक घट भरल सुधा रस, अमरित गजकर लाए ।
वाम दहिन भय सिञ्चित कर मुख, कमल मनोहर जाए ॥
मणिगण ज दत लसित भूषण तनु, कशना कह जगमाता ।
शंकर किकर इन्द्र आदि सुर, सेवक जनिक विद्याता ॥
पंकज आसन परम विकासन, ताहि उपर लस देवी ।
रत्नपाणि तसु ध्यान मगन मन, श्री मिथिलेशक सेबी ॥

टिप्पणी—कमलायत=कमलक पत्तीसनक समान आलि वाली । घनरुचि=
रत्न मेधक समान । चामीकर=सोनाक समान देह । चाह=
सुन्दर । लसय=शोभय । वराभय=दुइ हाथ मे वर ओ अभय
तथा दुइ हाथ मे दुइ कमल । गजकर=हाथी सूँढ मे अमृत भरि
वामा ओ दहिना भाग सँ देवीक मुँह मे ढारैत अछि । शंकर
किकर=शिव इन्द्र आदि देवता सेवक छथि ।

२१--महासरस्वतीक (राग विहाग)

दनुज दलनि दुर्गे भयहारिनि, जय पूरित मन कामे ।
शुभ निशुभ निशुदनि भगवति, महासरस्वति नामे ॥
घनरुचि केश भेज अति शोभित, आनन आनन्द कन्दा ।
तीनि नयन छवि अतिहि विराजित, माल बालतनु चन्दा ॥

सूत, शंख रथ-अंग, बाण तुल, दहिन भाग करचारी ।
 घण्टा, हल, पुनु मुसल, सरासन, वाम भाग कर चारी ॥
 अनुगत शंकरि, असुर भयंकरि, सारद ससि सम देहा ।
 बाहून सिंह लस्य तुल अनुपम, निज जन परम सिनेहा ॥
 रत्नपाणि करपुट कय नाचधि, सुनिय देवि मन लाई ।
 मिथिला पुरके पुरिय मनोरथ, नितदिन रहिय सहाई ॥

टिप्पणी—महासरस्वती = शुभमदिनी दुर्गा । बालतनु = छोटा देहवाला ।
 अनुगत = शरणगतक लेल शंकरो ॥

२२--शृंगारक गीत (राग-मल्लार)

सकल शृंगार सुभग शुभ वेशा, नृपगृहि देवि कएल परवेशा ॥
 दिन दिन मंगल कारिणि धन्या, सिंह चढ़लि राजए गिरिकन्या ॥
 शारद - चन्दसुचि चय देहा, कृपा बिलोकनि भक्त सिनेहा ॥
 क्षमा करिअ निज जन अपराधे, विभूषन तारिणि शील अगार्ध ॥
 रत्नपाणि कर गोचर आजे, सतत वरिय मिथिलेशक काजे ॥

२३--आरतीक गीत (राग-हमीर)

शुभ आइति जगदम्ब तिहारी, देखि समूह गिरिराजकुमारी ॥
 दीपक दीप पंचमुख चारी, ता मेंह घृत कपूर समहारी ॥
 नीराजन मन करत विचारी, प्रात समय अतिसय सुखकारी ॥
 शिव विरञ्चि सनकादि मुरारी, कर आइति तुअ जगत विचारी ॥
 रत्नपाणि फल चाहत चारी, देहु जननि फल अति शुभकारी ॥

